कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास को समर्पित

वर्ष 62 अंक : 05 पृष्ठ : 52 मार्च 2016 मूल्यः ₹ 10

कृषि और सम्बद्ध क्षेत्र

वार्षिक संदर्भ ग्रंथ-भारत / इंडिया 2016 का लोकार्पण

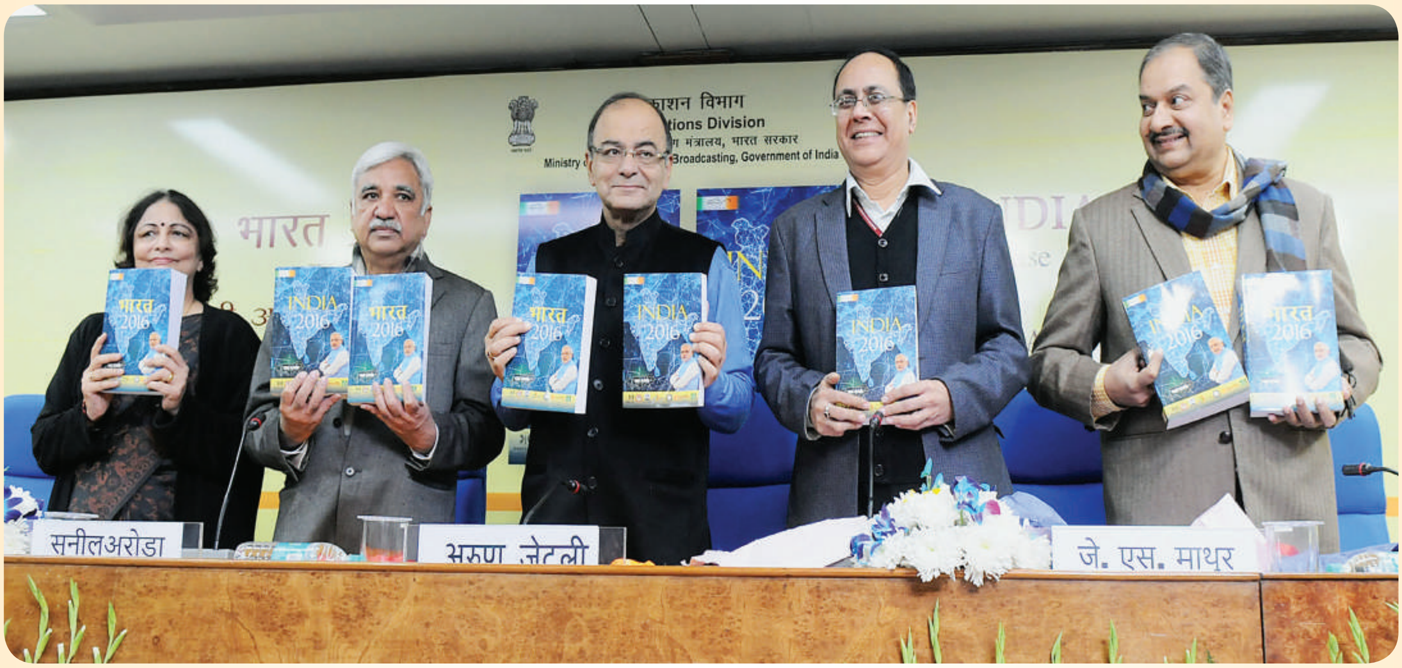

वित्त तथा कारपोरेट और सूचना एवं प्रसारण मंत्री श्री अरुण जेटली भारत 2016 और इंडिया 2016 का लोकार्पण करते हुए। साथ में सूचना और प्रसारण सचिव श्री सुनील अरोड़ा और अन्य वरिष्ठ अधिकारी भी हैं।

वित्त तथा कारपोरेट मामले और सूचना एवं प्रसारण मंत्री श्री अरुण जेटली ने 18 फरवरी, 2016 को भारत/इंडिया 2016 के प्रिंट और डिजिटल संस्करण का लोकार्पण किया। इस अवसर पर श्री जेटली ने इस वार्षिक संदर्भ ग्रंथ को सभी के लिए सूचनाओं का मूल्यवान भंडार बताया। उन्होंने कहा कि भारत/इंडिया 2016 में जो जानकारी दी गई है, उसे हर किसी को पढ़ना चाहिए। साथ ही यह भी कहा कि सरकारी प्रकाशनों के डिजिटलीकरण को प्राथमिकता दी जा रही है।

इस अवसर पर माननीय मंत्री महोदय ने प्रकाशन विभाग की प्रतिष्ठित पत्रिकाओं के लिए ऑनलाइन भुगतान और सदस्यता सेवाएं भी शुरू की। ये सेवा वित्त मंत्रालय के गैर–कर रसीद पोर्टल और भारतकोष पोर्टल के जरिए शुरू की गई है। अब योजना, कुरुक्षेत्र सहित प्रकाशन विभाग की अन्य मुद्रित पत्रिकाओं की ऑनलाइन सदस्यता ली जा सकती है।

रोजगार समाचार (अंग्रेजी) के डिजिटल संस्करण के शुभारम्भ के साथ–साथ, रोजगार समाचार (अंग्रेजी और हिंदी) की ऑनलाइन भुगतान सेवा भी भारतकोष पोर्टल पर प्रारम्भ की गई।

इस अवसर पर सूचना और प्रसारण सचिव श्री सुनील अरोड़ा ने कहा कि भारत/इंडिया संदर्भ ग्रंथ प्रकाशन विभाग का एक प्रामाणिक दस्तावेज है और शिक्षकों एवं प्रतिस्पर्धी परीक्षाओं की तैयारी कर रहे छात्रों के लिए बहुत उपयोगी है।

प्रकाशन विभाग की कुछ पुस्तकों की ई–कॉमर्स प्लेटफार्म के जरिए ऑनलाइन बिक्री भी पॉयलट आधार पर शुरू की गई है।

रोजगार समाचार (अंग्रेजी) का डिजिटल संस्करण http:www.en.eversion.in से प्राप्त किया जा सकता है। प्रकाशन विभाग की अन्य लोकप्रिय पत्रिकाओं (योजना, कुरुक्षेत्र आजकल और बालभारती) की ऑनलाइन सदस्यता वेबसाइट publicationsdivision.nic.in, yojana.gov.in और bharatkosh.gov.in से ली जा सकती है।

भारत/इंडिया 2016 का मुद्रित संस्करण ऑनलाइन http://goo.gl/QvNq6k से खरीदा जा सकता है। डिजिटल भारत/इंडिया 2016 ऑनलाइन http://goo.gl/kMGBzC से खरीदा जा सकता है।

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष : 62★ मासिक अंक : 05★ पृष्ठ : 52 ★फाल्गुन–चैत्र 1937★मार्च 2016

प्रधान संपादक
दीपिका कच्छल

संपादक
ललिता खुराना

संपादकीय सहयोग
मेहर सिंह

संपादकीय पत्र–व्यवहार
संपादक
कमरा नं. 655, प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स,
लोधी रोड, नई दिल्ली–110 003
दूरभाष : 011–24365925
वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

संयुक्त निदेशक
विनोद कुमार मीना

व्यापार प्रबंधक
दूरभाष : 011–24367453
ई–मेल : pdjucir@gmail.com

आवरण
आशा सक्सेना

सज्जा
आशीष कण्ठवाल

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
सार्क देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

अप्रैल 2016 से नए शुल्क प्रभावी

इस अंक में

कृषि क्षेत्र में 'लैब टू लैंड' दृष्टिकोण — धुरजती मुखर्जी — 5

राष्ट्रीय कृषि बाजार - एक दूरगामी सुधार — गार्गी परसाई — 9

सूचना प्रौद्योगिकी, मीडिया और कृषि विस्तार — उमाशंकर मिश्र, आयुष श्रीवास्तव — 12

कृषि क्षेत्र में सरकार के नए प्रयास और उनका प्रभाव — विष्णु नारायण — 15

कृषि विकास की नवीनतम तकनीकें — डॉ.वीरेन्द्र कुमार — 19

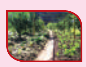 जमाना जैविक खेती का — गजेंद्र सिंह मधुसूदन — 24

बीज सब्सिडी में डीबीटी व्यवस्था ने उत्तर प्रदेश में लिखी सफलता की कहानी — अमित मोहन प्रसाद — 31

भारतीय कृषि परंपरा को पुर्नस्थापित करना जरूरी — अमित कुमार सिंह — 35

भारत में डेयरी उद्योग : सफलताएं और चुनौतियां — गौरव कुमार — 39

खेतीजनित कारोबार से जुड़कर बन रहे हैं स्वावलंबी — बलवंत सिंह मौर्य — 42

रासायनिकों से मुक्ति का बेहतर विकल्प शून्य बजट कृषि — अजीत कुमार — 46

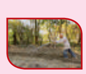 जय जवान, जय किसान और जय विज्ञान को अमलीजामा पहनाता किसान — सुधांशु गुप्त — 48

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, कमरा नं. 48–53, सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली – 110003 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए सहायक विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, कमरा नं. 48–53, सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली – 110003 से संपर्क करें। दूरभाष : 011–24367453

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो। पाठकों से आग्रह है कि कैरियर मार्गदर्शक किताबों/संस्थानों के बारे में विज्ञापनों में किए गए दावों की जांच कर लें। 'कुरुक्षेत्र' पत्रिका में प्रकाशित विज्ञापनों की विषय–वस्तु के लिए उत्तरदायी नहीं है।

संपादकीय

प्राकृतिक और भौगोलिक विविधताओं के बावजूद हमारा देश कृषि प्रधान है। देश की लगभग दो तिहाई जनसंख्या आज भी प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से कृषि पर आश्रित है। इसके बावजूद सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान लगातार कम होना चिंतनीय है।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि कृषि एवं किसान देश की अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं। अर्थव्यवस्था में इन्हें इनकी वाजिब जगह दिलाने के लिए वर्तमान में सरकार ने कई महत्वपूर्ण निर्णय लिए हैं। किसानों की आमदनी बढ़ाने के लिए फसलों की उत्पादकता बढ़ाने के साथ–साथ पशुपालन, बागवानी एवं मत्स्य पालन को भी बढ़ावा देने की दिशा में पहल की जा चुकी है। इस कदम से लघु एवं सीमांत और भूमिहीन किसानों को काफी फायदा पहुंचने की उम्मीद है। बागवानी फसलों की खेती के विकास के लिए 'चमन' नाम की योजना के साथ ही पशुओं की देशी नस्लों में सुधार के लिए 'राष्ट्रीय गोकुल मिशन' शुरू किया गया है और मत्स्यिकी क्षेत्र को आगे ले जाने के लिए 'नीली क्रांति योजना' चलाई जा रही है। इससे मछुआरों, महिला मछुआरों तथा जल कृषि किसानों की आजीविका में सुधार होगा। साथ ही, इससे ग्रामीण इलाकों में जहां की आबादी में प्रोटीन की कमी है, उसकी भी भरपाई हो सकेगी।

कृषि विकास व किसान हित में 'मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना', हर खेत तक पानी पहुंचाने के उद्देश्य से शुरू की गई 'प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना', 'परंपरागत कृषि सिंचाई योजना' के अंतर्गत जैविक खेती को बढ़ावा देना, किसानों को उनके उत्पादों का बेहतर मूल्य प्राप्त हो, इसके लिए 'एग्रीटेक इन्फ्रास्ट्रक्चर फंड' तथा 'संगठित राष्ट्रीय कृषि मंडी' से उन्हें जोड़ने जैसी कई महत्वाकांक्षी योजनाएं कार्यान्वित कर दी गई हैं।

कृषि तकनीक में हो रही प्रगति प्रयोगशालाओं तक ही सीमित न रहे, इसके लिए 'लैब टू लैंड' मिशन को धारदार बनाने के तरीके अपनाए जा रहे हैं। इसके लिए कृषि प्रसार के तंत्रों, जैसे कृषि विज्ञान केंद्रों तथा राज्यों के बीच सामंजस्य बनाकर नई तकनीकों को किसानों के खेतों तक पहुंचाया जा रहा है। युवाओं को कृषि कार्य से जोड़ने के लिए 'आर्या' नाम से योजना शुरू की गई है। वहीं वृद्धावस्था के लिए 'अटल पेंशन योजना' की भी शुरुआत की जा चुकी है।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि कृषि में ढांचागत सुधार लाए बगैर दीर्घकालिक एवं स्थायी प्रगति संभव नहीं है। इस लक्ष्य की प्राप्ति की ओर भी सरकार प्रयास कर रही है। कृषि के हर क्षेत्र अर्थात् कृषि शिक्षा, शोध एवं प्रसार के सुदृढ़ीकरण हेतु कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। कृषि क्षेत्र में शोध के लिए दो नए राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान संस्थानों की स्थापना के प्रावधान के साथ चार नए कृषि विश्वविद्यालयों की स्थापना की जा रही है। इसके साथ ही तीन केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालयों के अंतर्गत कई नए कृषि महाविद्यालय खोले जाने के कार्य में तेजी लाई जा रही है।

परंपरागत कृषि विकास योजना के तहत सरकार जैविक खेती को प्रोत्साहन दे रही है जिससे मृदा स्वास्थ्य में सुधार हो और उत्तम गुणवत्ता की फसल हो। वर्ष 2015–16 से ₹ 300 करोड़ के परिव्यय के साथ लागू इस योजना में 50 एकड़ भू–जोत धारक 50 अथवा अधिक किसानों के समूह को जैविक खेती शुरू करने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा। पूर्वोत्तर क्षेत्र के लिए भी एक विशेष योजना शुरू की गई है जिसका आवंटन ₹ 125 करोड़ है। यह योजना जैविक कृषि एवं जैविक उत्पाद के निर्यात संवर्धन के लिए शुरू की गई है।

हाल ही में केंद्र सरकार ने प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना की घोषणा की है। इस योजना की मांग किसान वर्षों से करते आ रहे हैं। फसल बीमा योजना को व्यापक व समावेशी बनाते हुए इसे खेत में फसलों की बुवाई से खलिहान तक को समेटने की कोशिश की गई है। पोस्ट हार्वेस्टिंग में होने वाले नुकसान को भी शामिल किया गया है। किसानों को अब बीमा क्लेम के लिए भी लंबे समय तक इंतजार नहीं करना होगा। अगर इस योजना का सही तरह से क्रियान्वयन होता है तो इससे किसानों की खेती में न केवल रुचि जागृत होगी बल्कि उनके भीतर छुपा डर भी दूर होगा जिसके कारण किसान फसलों पर ज्यादा पैसा खर्च करने से डरते हैं।

कृषि क्षेत्र में सूचना प्रौद्योगिकी के विस्तार हेतु भी कदम उठाए गए हैं। किसानों के लिए एम–किसान पोर्टल शुरू किया गया जोकि किसानों को उनके स्वयं के द्वारा चुनी गई फसलों/कृषि प्रक्रियाओं और उनकी स्थानीय जरूरतों के अनुसार उनकी अपनी भाषा में जानकारी/परामर्श देता है। किसान पोर्टल के विस्तार और सुदृढ़ीकरण के साथ इसका हिंदी संस्करण भी तैयार किया गया है। इसका उद्देश्य देश के राज्यों में 585 विनियमित थोक बाजारों के लिए उपयुक्त कॉमन ई–बाजार मंच तैयार करना है। वर्तमान में कृषि विपणन प्रणाली में आने वाली चुनौतियों को एआईटीएफ व्यापक रूप से दूर करेगा।

प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के स्थापना दिवस समारोह को संबोधित करते हुए 29 जुलाई, 2014 को कहा था–"हमें दो चीजों को सिद्ध करना है–"पहला तो यही कि हमारा किसान देश और दुनिया का पेट भरने में सामर्थ्यवान हो और दूसरा हमारी कृषि किसानों की जेब भरने में समर्थ हो।" पिछले डेढ़ वर्षों में किसान हित में जिस तेजी से नई योजनाएं आ रही हैं उससे लगता है कि आने वाले समय में प्रधानमंत्री जी की यह बात सही साबित होगी। कृषि घाटे का सौदा न रहकर एक व्यवसाय की तरह फलेगी–फूलेगी। ऐसा तभी संभव है जब हम खेतीबाड़ी के साथ–साथ पशुपालन को बढ़ावा देते हुए जैविक खाद के प्रयोग हेतु किसानों को प्रोत्साहित करें जिससे विश्व बाजार में न केवल भारतीय खाद्य उत्पादन की गुणवत्ता स्थापित होगी बल्कि किसानों की आय भी बढ़ेगी।

कृषि क्षेत्र में 'लैब टू लैंड' दृष्टिकोण

—धुरजती मुखर्जी

करीब 20,000 चुने हुए गांवों तक पहुंचने का लक्ष्य वास्तव में वर्तमान सरकार द्वारा हाल ही में उठाया गया एक महत्वपूर्ण कदम है। उन्हें कृषि क्षेत्र की समस्याएं भलीभांति मालूम हैं जोकि उनके फैसले से स्पष्ट होता है। उत्पादन और उत्पादकता में वृद्धि हेतु लंबा सफर तय करने के लिए कमर कसकर तैयार रहना चाहिए। पौधों में बीमारियों की समस्या, खाद और रसायन की उचित मात्रा, कीड़ों के प्रकोप से पौधों की सुरक्षा इत्यादि वैज्ञानिकों की उचित सलाह और मार्गदर्शन से किया जा सकता है। जाहिर है इस तरह के मार्गदर्शन का अधिकतम लाभ उन छोटे और मध्यम दर्जे के किसानों को होगा जोकि पर्याप्त जागरूक नहीं हैं, उन्हें इस मार्गदर्शन की विशेष जरूरत होगी।

सरकार द्वारा शुरू किए गए पुनरुद्धार कार्यों से भारतीय कृषि क्षेत्र में परिवर्तन लाया जा सकता है। भारत निसंदेह सबसे बड़ा दूध उत्पादक देश है और दूसरा सबसे बड़ा अनाज उत्पादक देश भी (200 मिलियन टन से भी अधिक)। साथ ही फल और सब्जियां (150 मिलियन टन), दूध (91 मिलियन टन) और गन्ने का उत्पादन भी होता है। यह संतोषजनक है लेकिन एक तथ्य यह भी है कि पौष्टिक आहार और कुपोषण देश की गंभीर समस्याओं में से हैं जोकि इस देश की खराब छवि पेश करता है। हालांकि यह भी ध्यान में रखते हुए विचार करने की जरूरत है कि भारत दुनिया में तेजी से बढ़ती जनसंख्या वाला देश है। जनसंख्या विस्फोट को देखते हुए खाद्य उत्पादन में बढ़ोतरी वास्तव में एक बहुत ही चुनौतीपूर्ण काम है।

यह एक सर्वविदित तथ्य है कि गरीब और आर्थिक रूप से कमजोर लोग महंगाई की वजह से फलों की निरंतर खरीदारी

कर सकने में सक्षम नहीं होते। जहां तक दूध का सवाल है तो गरीब तबकों में कुछ ऐसे हैं जिनके परिवार के लिए तो यह उपलब्ध ही नहीं होता। हां, बच्चों के लिए उपलब्ध हो सकता है। हालांकि चावल और गेहूं का उत्पादन काफी अधिक है लेकिन वहां भी उत्पादन में और वृद्धि की जरूरत है।

एक अग्रिम लक्ष्य में कृषि मंत्रालय ने मौजूदा वर्ष में 12.4 करोड़ टन खरीफ फसल के उत्पादन का लक्ष्य रखा है जोकि गत वर्ष के मुकाबले 60 लाख टन कम और किसी भी पिछले तीन वर्ष के मुकाबले कम है। इसी तरह अनाज उत्पादन का लक्ष्य जोकि 11.8 करोड़ टन है, वह पिछले तीन सालों के मुकाबले 50 लाख टन कम है; और 5.6 मिलियन टन दाल के औसत उत्पादन का लक्ष्य भी पिछले तीन सालों के मुकाबले आधा मिलियन टन कम है।

खरीफ की पिछली दो फसलें कमजोर मानसून की भेंट चढ़ गई जबकि पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश और राजस्थान के विभिन्न हिस्सों में भारी और असामयिक बारिश के चलते रबी की फसलें बर्बाद हो गईं। अब कृषि वैज्ञानिकों की राय है कि इस बार सर्दियों के मौसम में आई उष्णता से खासतौर पर पंजाब और हरियाणा में गेहूं की फसलें प्रभावित हो सकती हैं। मौसम में इसी तरह उष्णता और रुखापन रहा तो उत्तर प्रदेश में भी गेहूं और चने का फूलना और पकना प्रभावित हो सकता है। यही हाल राजस्थान का रहने वाला है। आशंका है कि वर्ष 2016 के ग्रीष्मकाल में देश चावल की कमी से जूझ सकता है लेकिन कुछ सकारात्मक उपाय इस संकट से उबरने में मदद कर सकते हैं। हालांकि मुश्किल हालात आने पर सरकार कुछ चावल आयात भी कर सकती है।

नैरोबी में हाल में विश्व व्यापार संगठन की बैठक हुई, जहां भारत ने करीब 50 विकासशील देशों के एक समूह का नेतृत्व किया। इस बैठक में अमीर देशों द्वारा कृषि उत्पादन के लिए खाद्य और कृषि सब्सिडी को खत्म किए जाने के प्रयासों और खुले घरेलू बाजार के मुद्दे पर चर्चा हुई। यह भारत, ब्राजील, इंडोनेशिया आदि देशों के लिए असंभव है कि वह अपनी सब्सिडी और आयात शुल्क को कम करें ताकि पश्चिम के कृषि उत्पाद यहां के बाजारों में आसानी से घुसपैठ कर सकें। यह किसी भी कीमत पर नहीं हो सकता और ना ही होना चाहिए क्योंकि हमारे किसानों की आजीविका उनके लघु उद्यमों पर निर्भर रहती है। हमारे वाणिज्य मंत्री ने भी इसे वाजिब तौर पर दोहराया था।

कुछ सालों में तकनीकी ने उत्पादन में वृद्धि और उत्पादकता में बड़ी सहायता प्रदान की है लेकिन इसे ध्यानपूर्वक सहेजने की आवश्यकता है। बहुचर्चित हरितक्रांति उत्तर भारत के दो राज्यों तक ही सीमित थी। देश के पूर्वी राज्यों को इसमें शामिल करने के लिए पिछले दशक या उससे भी अधिक समय से कृषि विशेषज्ञों द्वारा द्वितीय हरितक्रांति की जरूरत पर बल दिया जाता रहा है, क्योंकि इन राज्यों में फिलहाल राष्ट्रीय और अंतराष्ट्रीय–स्तर के मुकाबले उत्पादकता काफी कम है।

'लैब टू लैंड' दृष्टिकोण पिछले दो दशक या उससे भी ज्यादा समय से हवा में रहा है, लेकिन अब लगता है कि सरकार इसे वास्तविक तौर पर लागू करने में गंभीर रूचि दिखा रही है। पिछले साल अक्टूबर में ही यह समझा गया कि कृषि क्षेत्र में अनुसंधान और शिक्षा के विस्तार हेतु प्रधानमंत्री के सपनों को पूरा करने के लिए 20 हजार कृषि वैज्ञानिकों की जरूरत पड़ेगी। इस नये आदेश का विस्तार भी कर दिया गया है जिसके तहत भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के विभिन्न केंद्रों में करीब 6,000 वैज्ञानिक कार्य निष्पादन कर रहे हैं वहीं 15,000 वैज्ञानिक राज्य कृषि विश्वविद्यालयों के अधीन हाल ही शुरू किए गए 'मेरा गांव मेरा गौरव' कार्यक्रम के तहत कार्य कर रहे हैं। इस योजना में वैज्ञानिकों के लिए यह प्रावधान रखा गया है कि वे अपनी सुविधा के मुताबिक गांवों का चयन करें और उन गांवों के साथ संपर्क साधते रहें तथा व्यक्तिगत यात्राओं के जरिए या फिर टेलीफोन द्वारा एक निश्चित समय पर किसानों को तकनीकी और अन्य संबंधित पहलुओं की जानकारी प्रदान करते रहें।

यह समझा जा चुका है कि चार बहु–विषयक वैज्ञानिक समूहों में से प्रत्येक समूह को इन संस्थानों और विश्वविद्यालयों में गठित किया जाना है। वैज्ञानिकों को उम्मीद है कि कृषि विकास केंद्रों (केवीके)

और कृषि प्रौद्योगिकी प्रबंधन एजेंसी (एटीएमए) की मदद से कार्य निष्पादन किया जाएगा क्योंकि दोनों को कार्य विस्तार का आदेश दिया जा चुका है। राष्ट्रीय–स्तर पर सहायक महानिदेशक (विस्तार) और आईसीएआर के कृषि विस्तार के प्रमुख वैज्ञानिक नोडल अधिकारी होंगे।

कृषि अनुसंधान परिषद के वैज्ञानिकों के एक वर्ग का कथित तौर पर कहना है कि अगर विस्तार कार्य पर ध्यान स्थानांतरित कर दिया गया तो इससे अनुसंधान कार्य पर प्रभाव पड़ सकता है। लेकिन इसका यह जवाब है कि अगर अनुसंधान जमीनी–स्तर पर नहीं स्थानांतरित किया जा सका और अगर छोटे किसानों को लाभ नहीं मिला तो इस तरह के शैक्षिक अनुसंधान कार्य का या तो मामूली महत्व रह जाएगा या फिर इसका कोई औचित्य नहीं रहेगा। वैसे यह भी एक तथ्य है कि शोधकर्ता समाधान को लागू करने, जमीनी समस्याओं को देखने और उत्पादकता में वृद्धि के लिए कृषक समुदाय की सहायता करने के लिए खुद से आगे नहीं आते।

करीब 20,000 चुने हुए गांवों तक पहुंचने का लक्ष्य वास्तव में वर्तमान सरकार द्वारा हाल ही में उठाया गया एक महत्वपूर्ण कदम है। उन्हें कृषि क्षेत्र की समस्याएं भलीभांति मालूम हैं जोकि उनके फैसले से स्पष्ट होता है। उत्पादन और उत्पादकता में वृद्धि हेतु लंबा सफर तय करने के लिए कमर कसकर तैयार रहना चाहिए। पौधों में बीमारियों की समस्या, खाद और रसायन की उचित मात्रा, कीड़ों के प्रकोप से पौधों की सुरक्षा इत्यादि वैज्ञानिकों की उचित सलाह और मार्गदर्शन से किया जा सकता है। जाहिर है इस तरह के मार्गदर्शन का अधिकतम लाभ उन छोटे और मध्यम दर्जे के किसानों को होगा जोकि पर्याप्त योग्य नहीं हैं, उन्हें इस मार्गदर्शन की विशेष जरूरत होगी।

अगर आईसीएआर के 2000–3000 वैज्ञानिकों तथा अन्य राज्यों के संस्थानों व विश्वविद्यालयों के 7000–8000 वैज्ञानिकों का सहयोग एक साथ मिले तो निस्संदेह देश के किसान वर्ग को अहम सहायता मिल सकेगी। जैसाकि सर्वज्ञात है किसान विकास केंद्रों से ज्यादा मदद नहीं हो रही है और अधिकांश क्षेत्रों में यह लगभग समाप्त हो चुका है। इस प्रकार इस तरह के प्रयास से ज्यादातर वे किसान, जो वर्तमान में समस्याओं का सामना कर रहे हैं, उन्हें अनेक तरह के अप्रत्याशित लाभ का परिणाम मिलने की उम्मीद है।

इस तरह के प्रयास से उन गांवों में प्रौद्योगिकी लगाने में मदद मिलेगी जहां उत्पादकता का स्तर काफी कमजोर है, और जिन्हें बढ़ाए जाने की जरूरत है। इससे फसल खराब हो जाने पर कोई हल निकाला जा सकता है। साथ ही सूखे और बाढ़ के बाद के प्रभाव से भी निपटा जा सकता है। आईआईटी भी गांवों में कुछ कार्य कर रही है और तकनीकी लगा रही है ताकि ना केवल कृषि उत्पादकता के क्षेत्र में बल्कि इस क्षेत्र की अन्य निर्माण गतिविधियों में भी सकारात्मक बदलाव आ सके।

इसके अलावा सरकार ने 8800 करोड़ रुपये की एक नई फसल बीमा योजना की घोषणा की है जिसे प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना (PMSBY) कहा गया है। यह प्राकृतिक आपदाओं के चलते फसल के नुकसान की भरपाई करने हेतु किसानों के लिए काफी कम प्रीमियम वाला बीमा है। इस योजना के मुताबिक किसानों को खरीफ/खाद्यान्न/तिलहन उत्पादन की कुल बीमा राशि का महज 2 प्रतिशत भुगतान करना होगा और रबी की फसलों के लिए कुल बीमा राशि का 1.5 प्रतिशत भुगतान करना होगा। वास्तव में यह उत्पादन और उत्पादकता को बढ़ावा देने के मकसद से बहुत ही विवेकसम्मत कार्यक्रम है।

यह समय स्थिर फसल देने का है, दलहन के उत्पादन को भी काफी बढ़ाया जाना है। यह अंतर्राष्ट्रीय दलहन वर्ष है, खासतौर पर भारत जैसे तीसरी दुनिया के देशों के गरीब तबकों की मांग को लेकर यहां विकास को सुनिश्चित करने के लिए विशेष प्रोत्साहन की जरूरत है। अंतर्राष्ट्रीय दलहन वर्ष का लक्ष्य जनता के बीच स्थायी खाद्य सुरक्षा और पोषण के हिस्से के रूप में दालों की पौष्टिकता संबंधी लाभों को लेकर जागरुकता बढ़ाना

है। भारत सरकार को खाद्य श्रृंखला के द्वारा दलहन के बेहतर उपयोग आधारित प्रोटीन और दलहन की उत्पादन वृद्धि को प्रोत्साहित करने का अवसर हासिल करना चाहिए। हमारे जैसे देश में, जहां महिलाओं और बच्चों में बड़े पैमाने पर पौष्टिकता की कमी रहती है, वहां दालों को बढ़ावा देने के लिए उसे सस्ती करने और उसे प्रोटीन के लिए महत्वपूर्ण और पौष्टिक बनाने की जरूरत है। ये सूक्ष्म पोषक तत्व बहुत से लोगों के स्वास्थ्य और जीवन के लिए अत्यंत लाभकारी सिद्ध हो सकते हैं।

यहां यह भी उल्लेखनीय है कि दलहन किसानों को गांव की गरीबी से बाहर निकालने की क्षमता प्रदान करता है, वे अनाज की तुलना में दो से तीन गुना अधिक कीमतों की उपज कर सकते हैं। इस तरह इसका प्रसंस्करण उन्हें अतिरिक्त आर्थिक अवसर प्रदान करता है। इस संबंध में संयुक्त राष्ट्र महासचिव की टिप्पणी का उल्लेख करना उचित होगा कि भूख, खाद्य सुरक्षा, कुपोषण और मानव स्वास्थ्य के लिए दलहन का महत्वपूर्ण योगदान है। इसमें सरकारी पहल को भी जोड़ने की जरूरत है खासतौर पर हाल ही में प्रधानमंत्री द्वारा घोषित की गई फसल बीमा योजना में, जिसमें दो साल के भीतर कम से कम 50 प्रतिशत किसानों को शामिल किया जाना है। प्रधानमंत्री श्री मोदी ने भी हाल ही में अपने 'मन की बात प्रोग्राम में इस योजना से लाभ का उल्लेख करते हुए कहा कि इसमें किसानों को बहुत ही मामूली प्रीमियम देना होगा। इससे किसान समुदायों के बीच निस्संदेह आत्मविश्वास में वृद्धि होगी और विविध उत्पादनों के जरिए उनकी आय बढ़ाने में भी मदद मिलेगी।

हाल ही में संयुक्त राष्ट्र के महासचिव बान की मून ने सदस्य देशों से अपील की है कि वे साल 2025 तक 'जीरो हंगर' स्टेटस को हासिल करें। जैसाकि भारत में करीब 30 करोड़ की आबादी भूख से पीड़ित है, वहां अगले दस सालों में कुपोषित बच्चों की आबादी 30 फीसदी से 0 फीसदी तक लाने के लिए योजना व रणनीति बनाना वास्तव में बहुत ही चुनौतीपूर्ण है। लेकिन प्रगति की वर्तमान गति के साथ अगर ग्रामीण क्षेत्रों में लगातार ध्यान केंद्रित किया जाए तो इसे प्राप्त किया जा सकता है।

आज भारत जिस मोड़ कर खड़ा है वहां परिवर्तन लाने के लिए ग्रामीण अर्थव्यवस्था में सुधार लाना अत्यंत जरूरी है। मुख्य रूप से कृषि क्षेत्र को व्यावहारिक बनाने की जरूरत है और सरकार के ईमानदार प्रयास से निर्यात में बढ़ोतरी करनी चाहिए। इस संबंध में कृषि आधारित उद्योग देश और विदेश दोनों ही जगह काफी लाभकारी हो सकते हैं अगर इनकी उचित तरीके से मार्केटिंग की जाए। हाल ही में सरकार ने भी खादी एवं हथकरघा उद्योग पर जोर देने के लिए 'मेक इन इंडिया' की शुरुआत की है, यह काफी नया है और युवा पीढ़ी की जरूरतों को पूरा करने वाला है। वर्तमान सरकार का यह दृष्टिकोण काफी गंभीर और सकारात्मक प्रतीत होता है लेकिन इस योजना के क्रियान्वयन की नजदीकी से निगरानी की जरूरत है तब इसके परिणाम जल्दी देखने को मिलेंगे। ऐसा प्रतीत होता है कि इसमें आम आदमी की आजीविका के विकास और देश की आर्थिक तरक्की नहीं, बल्कि इसका सारा ध्यान ग्रामीण क्षेत्रों में बदलाव लाने पर केंद्रित है। गांव हमारी जीवन रेखा हैं। और जिस तरह सरकार द्वारा खेती में बदलाव लाने की पहल की गई है, अगर ईमानदारी से उन योजनाओं को लागू किया गया तो ग्रामीण क्षेत्रों में इसका परिणाम देखने को जरूर मिलना चाहिए।

ससेक्स विश्वविद्यालय से संबद्ध रहे जाने-माने अर्थशास्त्री प्रो. माइकल लिप्टन ने लगभग दो दशक पहले कहा था कि "तीसरी दुनिया के देशों में एक प्रवृत्ति आम है कि वहां के शहरी मध्यमवर्ग के लोग भी गांव के गरीबों के समान सब्सिडी चाहते हैं"। भारत में भी दूसरे विकासशील देशों की तरह कृषि और ग्रामीण विकास को दरकिनार करते हुए इस प्रवृत्ति को बढ़ावा दिया जा रहा है और विकास के पश्चिम मॉडल को अपनाया जा रहा है। इसमें कोई संदेह नहीं कि यह एक गलत रणनीति है, क्योंकि देश के पास खाद्य प्रसंस्करण और कृषि आधारित उद्योग की भरपूर क्षमता है, जहां अपेक्षाकृत रोजगार क्षमता अधिक है। कुछ इसी तरह पाकिस्तान के पूर्व वित्तमंत्री और मानव विकास रिपोर्ट के प्रस्तोता स्व. महबूब-उल-हक ने ठीक ही कहा था "विकास की मूल अवधारणा बहुत ज्यादा सकल घरेलू उत्पाद का स्तर नहीं है, हालांकि यह महत्वपूर्ण है लेकिन एक अनुकूल वातावरण बनाया जाना चाहिए जहां लोग लंबे समय तक आनंद उठा सकें, स्वस्थ रहें और रचनात्मक जीवन जी सकें। वास्तव में यही वाजिब दृष्टिकोण है लेकिन तीसरी दुनिया के देश गांव में खेती पर निर्भर सबसे निचले पायदान पर रहने वाले लोगों के जीवन की परवाह किए बिना उच्च विकास दर के दलदल में फंस गए हैं।

खाद्य सुरक्षा, सतत् कृषि और गरीबी उन्मूलन की दिशा में जमीनी विकास को ध्यान में रखते हुए कृषि और उद्योग तथा ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बीच संतुलन लाया जा सकता है। इस क्षेत्र में सोच-समझ कर रणनीति बनाई जानी चाहिए-यहां करोड़पतियों, गरीबों और वंचितों के बीच खाई बढ़ती जा रही है। इस तरह आने वाले सालों में कृषि क्षेत्र में पुनरुद्धार तथा ग्रामीण भारत में बदलाव की अपेक्षा बहुत महत्वपूर्ण है।

(लेखक जाने-माने पत्रकार हैं और विकास व पर्यावरण विषय के ज्ञाता हैं तथा सहज ई-विलेज लिमिटेड में सीनियर कंसल्टेंट हैं। साथ ही कई गैर-सरकारी संगठनों से संबद्ध हैं तथा राज्य पर्यावास एवं पर्यावरण फोरम (SHEF) के सचिव भी हैं।)

ई-मेलः dhurjatimukherjee54@gmail.com

अनुवादः संजीव श्रीवास्तव

राष्ट्रीय कृषि बाजार - एक दूरगामी सुधार

—गार्गी परसाई

'नाम' पोर्टल की परिकल्पना कृषि क्षेत्र में दूरगामी सुधारों हेतु एक प्रारंभिक बिंदु के रूप में की गई है। इससे न केवल पारदर्शिता आएगी, बल्कि उसमें ऐसी प्रणाली अंतर्निहित होगी जिसमें किसानों को अपनी उपज की बेहतर कीमत मिल सकेगी। मंडी में स्थानीय व्यापारी को 'नाम' पोर्टल एक व्यापक बाजार प्रदान करता है।

करनाल में एक किसान ट्रैक्टर भाड़ा कर अपना गेहूं बाजार में लेकर आया, इस गेहूं को उसने छह महीने की मेहनत और परिश्रम के बाद उगाया था। कमीशन एजेंट आगे बढ़ा और उसके लिए नीलामी का सेट बना दिया। छह या सात व्यापारी उसके गेहूं के टीले के चारों ओर जमा होने लगे। उन सबने गेहूं को मुट्ठी में भर कर उठाया और उसकी गुणवत्ता की परख की। और फिर इसके बाद कमीशन एजेंट और खरीदारों के बीच सांकेतिक भाषा में 'बोली' लगनी शुरू हो गई।

कमीशन एजेंट की उंगलियों के ऊपर रूमाल फैला हुआ था, जोकि इच्छुक खरीदारों को कीमत के बारे में संकेत करता था कि यह सरकार द्वारा तय किए गए न्यूनतम समर्थन मूल्य से भी नीचे है। यदि खरीदार रुमाल के नीचे एक उंगली रखता है तो इसका मतलब हुआ कि दाम कम है। जिसके बाद कमीशन एजेंट जो दाम बताता है उसे निराश किसान आमतौर पर स्वीकार कर लेता है। वैकल्पिक तौर पर किसान को जो भुगतान मिलने वाला होता है उसे स्थगित कर दिया जाता है और उसे बिक्री पट्टी (इनवॉयस) पर दे दिया जाता है। कभी–कभी व्यापारी मंडी करों से बचने के लिए पट्टी भी नहीं देता जिसके चलते किसान का संकट बरकरार रहता है। इसके बाद उसके सामने अग्रिम या ऋण लेने के सिवा कोई दूसरा रास्ता नहीं होता। जब किसान के उत्पादन का सौदा कमीशन एजेंट और व्यापारी के बीच पक्का हो जाता है तब एजेंट अपनी दलाली को तय करता है जोकि नियमतः 2 फीसदी ही है लेकिन वह 6 प्रतिशत तक जा सकता है। वह अन्य शुल्क मसलन ट्रैक्टर से गेहूं को उतारना और उसकी सफाई को भी कम कर देता है। इन शुल्कों को कम करने के बाद किसान का अगर कोई ऋण आगे बढ़ा दिया गया है तो उसके पैसे भी एजेंट किसान को देता है।

एक कमीशन एजेंट को गांव के उस साहूकार के तौर पर समझा जाना चाहिए जो किसानों और जरूरतमंदों को पैसे देता है। किसान इस चक्र को तोड़ नहीं सकते। क्योंकि कमीशन एजेंट चिकित्सा, शादी, शिक्षा और इन जैसी अन्य जरूरतों के लिए उच्च ब्याज दर पर पैसे उपलब्ध कराने के लिए चौबीसों घंटे उपलब्ध रहता है। यह पीढ़ी–दर–पीढ़ी चलता आ रहा रिश्ता है, किसानों को इससे बाहर नहीं निकलने देता। इस रिश्ते को बॉलीवुड की क्लासिक फिल्म 'मदर इंडिया' में बेहतर तरीके से दिखाया गया है। कमीशन एजेंट ना तो खरीदार है और ना ही विक्रेता। वह एक बिचौलिया है जोकि दोनों तरफ से कमाता है और किसानों या फिर गांव के जरूरतमंदों को दिए गए ऋण पर ब्याज लेता है।

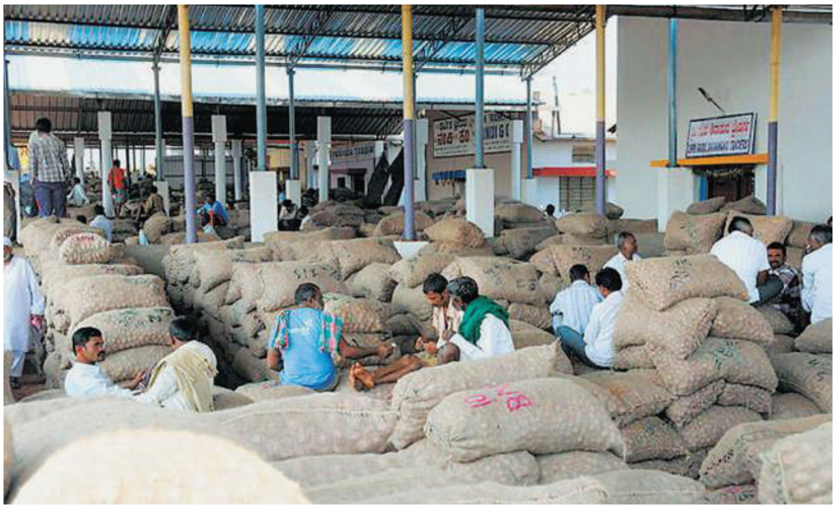

सालों से मंडियों में किसानों के उत्पादन की खरीद का यह तरीका चल रहा है, जहां केवल लाइसेंसधारी कमीशन एजेंट और व्यापारियों को ही कार्य करने की अनुमति है। अस्सी फीसदी छोटे और सीमांत किसान इस श्रेणी में आते हैं जिनके पास एक हेक्टेयर से कम भूमि है (जो अपने गांव से चल कर आते हैं, ट्रैक्टर भाड़ा करते हैं; जिन्होंने ऋण ले रखा है,) उनके पास इन मंडियों में अपने उत्पाद को बेच देने के अलावा कोई चारा नहीं होता। चूंकि रबी फसल गेहूं का उत्पादन साल में एक बार ही होता है, इसी से वह अपने घर का खर्चा चलाता है और अगली खरीफ या अन्य फसलों

की खेती के लिए योजना बनाता है। उसके सामने और कोई दूसरा रास्ता नहीं होता। लिहाजा आजीविका के लिए ऋण लेने और जमानत के तौर पर भूमि गिरवी रखने की मजबूरी होती है। मंडियों का संचालन कृषि उत्पाद विपणन समिति (एपीएमसी) अधिनियम द्वारा होता है, जहां व्यापारी किसानों से सीधे खरीदी नहीं कर सकते। सरकारों ने राज्यों से एपीएमसी एक्ट में संशोधन करने और कम से कम फलों और सब्जियों को अधिसूचित वस्तुओं की सूची से बाहर निकालने का आग्रह किया है ताकि किसानों को उनकी बकाया राशि मिल सके और उपभोक्ताओं को उचित मूल्य पर उत्पाद। लेकिन मंडी शुल्क और करों के रूप में अर्जित राजस्व खोने के डर से कई राज्य इस महत्वपूर्ण सुधार पर ध्यान नहीं दे पाते।

इसके अलावा किसान अनपढ़ और असंगठित हैं, उनके हित की ओर झुकाव रखने वाली राजनीतिक इच्छाशक्ति भी कम है। कई समितियों और आयोगों की सिफारिशों के बावजूद वे अपनी उपज के लिए उचित कीमत पाने से विफल हैं। हमेशा उसे लागत की तुलना में कम ही लाभ हासिल होता है। उपभोक्ताओं को उसके बदले भुगतान करने में पसीने छूट जाते हैं। जाहिर है बाजार निहित स्वार्थों द्वारा विकृत हो रहे हैं।

अब इस ठहराव को दूर करने और डिजिटलीकरण के साथ व्यवस्था में पारदर्शिता लाने के मकसद से राजग सरकार ने विपणन प्रणाली में सुधार करने के लिए एक बड़ा कदम उठाया है। 200 करोड़ रु. के प्रारंभिक बजट के साथ कृषि तकनीक इन्फ्रास्ट्रक्चर फंड के माध्यम से एक राष्ट्रीय कृषि बाजार (एनएएम) की स्थापना करने का निर्णय लिया गया है जो राज्य एपीएमसी अधिनियम को मानेंगे वे ही इसके सुधार उपाय में भाग लेने के लिए सक्षम होंगे, जिसे लघु कृषक कृषि व्यवसायी संघ द्वारा साल 2018 तक चरणबद्ध तरीके से लागू किया जाएगा।

जिन राज्यों ने अब तक एपीएमसी एक्ट में संशोधन किया है और सुधारों की दिशा में आगे कदम बढ़ाया हैं, वे हैं—आंध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़, गोवा, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, झारखंड, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, मिजोरम, राजस्थान और तेलंगाना। आधिकारिक सूत्रों के मुताबिक हरियाणा में एक प्रशासनिक आदेश के माध्यम से अधिनियम में संशोधन किया गया है, जबकि उत्तर प्रदेश ऐसा करने की प्रक्रिया में है। जिन राज्यों को शुल्क और करों से मंडी राजस्व खोने का भय है उनमें एक पंजाब है जहां यह उच्चस्तरीय 14 प्रतिशत है। दिलचस्प बात यह है कि बिहार में एपीएमसी एक्ट को समाप्त कर दिया है, लेकिन इसकी जगह कोई और साधन स्थापित नहीं किया गया है जोकि एक वांछनीय बात नहीं है। केरल में भी एपीएमसी अधिनियम नहीं है।

एपीएमसी अधिनियम औपनिवेशिक सत्ता की देन है उसके नियम में एक बड़ी खामी है कि एक व्यापारी को एक ही राज्य के भीतर विभिन्न मंडियों में कामकाज के लिए अलग—अलग व्यापार लाइसेंस हासिल करना पड़ता है। एक अनुमान के मुताबिक 7,000 मंडियों में 14 लाख एजेंट हैं। मंडी वाणिज्य के इस तथ्य का मूल्यांकन अकेले दिल्ली की आजादपुर मंडी से किया जा सकता है जहां अनुमानित कारोबार 100 करोड़ रुपये है। हर मंडी में एक विपणन बोर्ड है जो इस तरह की अधिसूचित मंडियों के बुनियादी ढांचे के विकास और सेवाओं की देख—रेख मसलन स्वच्छ शौचालय, किसानों और व्यापारियों के लिए सुविधाएं आदि प्रदान करता है। वह चालान और अन्य शोषण के तहत शिकायतों समेत किसान कल्याण के लिए सुनवाई करता हैं। लेकिन एक किसान ने इस संवाददाता को बताया कि उन जैसे की आवाज इस सिस्टम में सबसे कमजोर पड़ जाती है। वे एक दिन के भीतर अपनी उपज बेचना और पैसे संग्रह करना चाहते हैं। इलेक्ट्रॉनिक राष्ट्रीय कृषि बाजार की पहल के साथ सरकार ने शोषणपूर्ण इस बाजार संरचना को दूर करने के इरादे का संकेत दिया है। राज्यों को केवल एक सुर में काम करना होगा।

कुछ महीने पहले नई दिल्ली में 'नाम' (राष्ट्रीय कृषि बाजार) के एक सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए केंद्रीय कृषि मंत्री श्री राधामोहन सिंह ने कहा था कि 'नाम' अखिल भारतीय इलेक्ट्रॉनिक ट्रेडिंग पोर्टल है जो मौजूदा एपीएमसी मंडियों और अन्य बाजार नेटवर्क के लिए कृषि का एक एकीकृत राष्ट्रीय बाजार बनाना चाहता है। एक मायने में 'नाम' एक 'वर्चुअल बाजार' है, जहां कीमतों की तलाश और बोलियों को ऑनलाइन आयोजित किया जाएगा। 'नाम पोर्टल' के द्वारा उदाहरण के लिए कोलकाता का एक खरीदार हरियाणा में बोली लगाने और एक वस्तु का उपयोग करने में सक्षम हो जाएगा। कमीशन एजेंट एक सेवा प्रदाता के अपने नए अवतार में वितरण और कमोडिटी की ढुलाई की सुविधा दे सकेगा। वह शुरू से अंत तक सक्रिय हो जाएगा।

ऑनलाइन पोर्टल में सहभागी बनने के लिए प्रत्येक राज्य को अपनी ई—मार्केटिंग पोर्टल की स्थापना करनी होगी। 'नाम' के केंद्र में प्लग—इन करने के लिए केंद्र सरकार ने राज्यों के लिए तीन बुनियादी मानदंडों को स्थापित किया है। सबसे पहला, राज्य एपीएमसी अधिनियम में संशोधन करे और इलेक्ट्रॉनिक ट्रेडिंग की सुविधा उपलब्ध कराए। दूसरा, राज्य एपीएमसी अधिनियम स्थानीय मंडियों में 'नाम पोर्टल' के माध्यम से व्यापार करने के लिए निजी कंपनियों सहित भारत में किसी को लाइसेंस जारी करने के लिए प्रदान करे। तीसरा, और सबसे महत्वपूर्ण बात यह कि प्रत्येक राज्य लेनदेन शुल्क का एक एकल बिंदु लेवी के साथ राज्य के भीतर सभी मंडियों को शामिल करे ताकि सबके लिए एकल लाइसेंस हो। मौजूदा एपीएमसी अधिनियम के तहत एक व्यापारी

को विभिन्न मंडियों के लिए अलग–अलग लाइसेंस प्रस्तुत करना होता था और लेनदेन का शुल्क देना पड़ता था। उदाहरण के लिए एक मंडी से दूसरी मंडी में भुगतान बाजार अर्थव्यवस्था के खिलाफ चला जाता है। राज्यों को उनकी मंडियों में नई सुधार संरचना लागू करने के लिए 30 लाख रु. का अनुदान दिया गया है।

'नाम पोर्टल' की शुरुआत के साथ किसानों के सामने विकल्प होगा कि वह अपने उत्पाद को स्थानीय मंडी में प्रस्तुत करे या ऑनलाइन खरीदारों (व्यापारियों) की मांग के मुताबिक अन्य बाजारों में एक बड़ा खिलाड़ी बनना चाहे। यह किसी को एक दूसरे राज्य में माल बेचने के प्रतिबंध को दूर करता है। एक ही समय कारगिल और आईटीसी जैसी बहुराष्ट्रीय दिग्गज कंपनियां बाजार में प्रवेश करेंगी। फ्लोर मिलर्स जो कथित तौर पर अनाज के बड़े लाभार्थियों में थे, वे सार्वजनिक खाद्य वितरण प्रणाली से हटकर पारदर्शी व्यापार के लिए जा सकते हैं।

जैसी कि इस प्रणाली की परिकल्पना की गई है, उसके तहत डिजीटल प्रक्रिया में सक्रिय और जागरूक बनने के लिए एजेंट और उनके प्रत्याशियों का क्षमता निर्माण किया जाएगा। एक किसान या उसकी ओर से एक एजेंट, एक सहकारी या यहां तक कि एक स्थानीय व्यापारी प्रयोगशाला प्रमाणित उपज की गुणवत्ता और विक्रेता (किसान) की कीमत को अपलोड कर सकेगा। पंजीकृत क्रेता/व्यापारी/कंपनी/आटा मिलर आदि कीमतों को ऑनलाइन देख सकेंगे। किसान या उनके प्रतिनिधि को एसएमएस द्वारा सबसे अधिक बोली भेजी जाएगी। दिन खत्म होने पर किसान 'वाई' यानी 'हां' या फिर 'एन' यानी 'ना' की सहमति या असहमति भेज सकेंगे और अगले दिन बिक्री के लिए अपने उत्पाद को रख पाएंगे।

यदि सौदा हो जाता है तो सामान्य कटौती के बाद कमीशन एजेंट द्वारा एक प्राथमिक चालान बनाया जाएगा और खरीदारों को भेजा जाएगा जोकि किसी भी क्षेत्रीय और सहकारी बैंक में ऑनलाइन भुगतान कर देगा। खरीदार के राशि जमा करने और समाशोधित राशि बैंक खाते में निपटान होने पर ही प्रत्यक्ष तौर पर राशि का वितरण किया जाएगा। एसएफएसी ने संघ के भागीदारों और रणनीति की पहचान कर ली है और इस साल अप्रैल तक राष्ट्रीय पोर्टल के तहत 5–6 मंडियों के साथ एक ई–प्लेटफॉर्म का पायलट शुभारंभ करने जा रहा है। विभिन्न चरणों में 2015–16, 2016–17 और 2017–18 में क्रमशः 250, 200 और 135 मंडियों को कवर करने का लक्ष्य रखा गया है।

कर्नाटक, गुजरात, महाराष्ट्र, तेलंगाना, झारखंड, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, राजस्थान जैसे राज्य ई–विपणन पोर्टलों की स्थापना और उसके साथ अपनी मंडियों को जोड़ने के लिए इस प्रस्ताव के साथ आगे बढ़कर आए हैं। उदाहरण के लिए कर्नाटक के 24 जिलों में 73 बाजारों के साथ जुड़ाव हुआ है और पिछले कुछ ही महीनों में करीब 939 लाख क्विंटल का संचालन किया गया है। कई अन्य राज्यों ने इस सुधार प्रक्रिया का हिस्सा बनने की अपनी इच्छा जताई है।

'नाम' पोर्टल की परिकल्पना कृषि क्षेत्र में दूरगामी सुधारों हेतु एक प्रारंभिक बिंदु के रूप में की गई है। यह ना केवल पारदर्शिता स्थापित करेगा, बल्कि किसानों को उसकी उपज का उचित मेहनताना दिलाने के लिए एक मूल्य खोज तंत्र भी बनेगा। मंडी में स्थानीय व्यापारी को 'नाम' पोर्टल एक व्यापक बाजार प्रदान करता है। थोक खरीदार, निजी कंपनियां, प्रोसेसर्स, निर्यातक आदि स्थानीय मंडी स्तर पर प्रत्यक्ष व्यापार करने में सक्षम हो जाएंगे। 'नाम' पोर्टल में राज्य की सभी मंडियों के एकीकरण के लाइसेंस जारी करने, लेनदेन शुल्क और उत्पाद की मुक्त आवाजाही की लेवी के लिए सामान्य प्रक्रियाओं को सुनिश्चित किया जाएगा। उम्मीद है कि धीरे–धीरे किसानों को उनकी उपज का लाभकारी मूल्य मिलेगा और भुगतान के लिए इंतजार नहीं करना पड़ेगा। बेशक उन्हें नई प्रक्रिया में प्रशिक्षित, शिक्षित और कुशल बनना होगा। इस प्रक्रिया में एक ओर स्थानीय मंडियों की क्षमताओं का प्रयोग होगा, वहीं दूसरी ओर मंडियों का एक राष्ट्रीय नेटवर्क बनेगा जो ऑनलाइन उपलब्ध होगा।

उम्मीद है कि इस मोर्चे पर माल का लंबी दूरी तक का परिवहन, एकीकृत मूल्य श्रृंखला, वैज्ञानिक और आधुनिक भंडारण की सुविधा उपलब्ध होगी। कमीशन एजेंट्स को धीरे–धीरे कुशल सेवा प्रदाताओं के रूप में विकसित करना होगा। यह माना गया है कि पारदर्शी और प्रत्यक्ष खरीद–बिक्री से लागत में कटौती और अंततः उपभोक्ताओं को लाभ होगा। मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना, हाल ही में शुरू हुई ग्राम आधारित फसल बीमा योजना, प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना और राष्ट्रीय कृषि बाजार संयुक्त रूप से कृषि क्षेत्र को सुधार के साथ मजबूत बनाएंगे और मौजूदा 250 मिलियन टन के औसत स्तर से साल 2020 तक खाद्यान्न उत्पादन में काफी वृद्धि होगी।

राष्ट्रीय कृषि बाजार एक संभावनाशील पहल है, लेकिन यह देखना होगा कि यह कैसे काम करता है और एजेंट या बिचौलियों पर कब्जा जमाने में क्या भूमिका निभाता है। एक किसान के लिए यह चकित करने वाला है कि स्थानीय व्यापारी/एजेंट जब उसका उत्पाद न्यूनतम समर्थन मूल्य पर स्थानीय मंडी से खरीदते हैं और इसे ऑनलाइन एक मंडी से दूसरे मंडी में ऊंची कीमत पर बेचते हैं। वास्तव में सरकार को किसानों के हितों की रक्षा के तंत्र को लेकर सोचना होगा।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं।)
ई–मेलः gargiparsai@yahoo.com
अनुवाद–संजीव श्रीवास्तव

सूचना प्रौद्योगिकी, मीडिया और कृषि विस्तार

—उमाशंकर मिश्र
—आयुष श्रीवास्तव

कृषि के समावेशी विकास रथ को गति देने के लिए केंद्र सरकार जहां एक ओर इंटरनेट की पहुंच को गांव के दूरदराज के इलाकों में सुनिश्चित करने के लिए प्रयासरत है, वहीं दूसरी ओर कृषि कार्य में इसके अनुप्रयोग को सुनिश्चित करने के भी प्रयास किए जा रहे हैं। हाल ही में मंजूर की गई प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना हो या कृषि विभाग द्वारा संचालित किए जा रहे किसान कॉल सेंटर, सभी डिजिटल तकनीक के कृषि में अनुप्रयोग की बात को प्रदर्शित करते हैं। कृषि उत्पादों के बाजार भाव की जानकारी देने के लिए विकसित किया गया मोबाइल एप या फिर बीमा योजना से संबंधित मोबाइल एप, सभी कृषि संबंधी सूचना जरूरतों को पूरा करने के लिए तत्पर हैं।वास्तविकता तो यह है कि भारत में कृषि विकास की चाबी अब सूचना एवं संचार तकनीक बन रही है। विभिन्न योजनाओं एवं उदाहरणों से यह बात स्पष्ट है कि सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी भविष्य में कृषि गवर्नेंस की राह को और ज्यादा आसान बना सकती है।

सामाजिक एवं आर्थिक विकास में सूचना एवं संचार की भूमिका काफी अहम मानी गई है। लेकिन सूचनाओं का आदान–प्रदान, संचार स्थापना और विभिन्न–विभिन्न युक्तियों में सूचना प्रौद्योगिकी के अनुप्रयोग से विकास के सूत्रों की तलाश करना तब तक संभव नहीं है, जब तक हम नवाचारों को प्रोत्साहन नहीं देते। नवाचारों को प्रोत्साहन और कृषि के आधुनिकीकरण से लेकर फसल सुरक्षा, कृषि विपणन और जागरुकता के प्रचार–प्रसार से जुड़ी कृषि एवं किसानों की तमाम समस्याओं के समाधान में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी उपयोगी साबित हो रही है।

संचार के जाने–माने विद्वान मार्शल मैकलुहन ने कहा है, 'माध्यम ही संदेश है", अर्थात किसी भी संदेश की प्रभावशीलता प्रेषण माध्यम की क्षमताओं पर निर्भर करती है। यदि माध्यम की पहुंच एवं विश्वसनीयता अधिक होगी, तो उस माध्यम से प्रेषित संदेश प्रभावशाली ढंग से कार्य करेगा। समाज के विकास में जन–माध्यमों की महती भूमिका रही है। लोकतांत्रिक वातावरण में विचारों के स्वतंत्र प्रवाह को गति देने में संचार माध्यमों ने सराहनीय योगदान दिया है। कुछ समय पहले प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की पहल पर जब किसान चैनल की शुरुआत की गई थी, उसके मूल में भी इसी तरह की भावना निहित थी, जिसका मकसद देश की बहुसंख्य कृषक आबादी के सशक्तीकरण का मार्ग प्रशस्त करना था। हाल के वर्षों में इसी तरह के कई प्रयास सरकारी एवं गैर–सरकारी स्तर पर

किए गए हैं जिनकी मदद से किसानों को एक नई दिशा मिल रही है।

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का मुख्य घटक मानी जाती है। देश की लगभग 60 फीसदी जनसंख्या सीधे रूप से कृषि रूपी रोजगार से जुड़ी हुई है। देश में बढ़ते सूचना तकनीक के प्रयोग को कृषि से जोड़ना एक अहम् कार्य है। इसी क्रम में वर्तमान सरकार की डिजिटल इंडिया एवं ई–क्रांति जैसी योजनाएं सूचना तकनीक के ग्रामीण क्षेत्रों में विकास को सुनिश्चित कर रही हैं। कृषि विभाग द्वारा डिजिटल मीडिया का व्यापक प्रयोग किया जा रहा है। विभाग द्वारा कई कृषि विकास सम्बंधी ऑनलाइन पोर्टल विकसित किए गए हैं जहां कृषि से संबंधित विभिन्न जानकारियां मुहैया कराई जा रही हैं। देश की विभिन्न कृषि पुनर्वास योजनाओं का डिजिटलाइजेशन किया जा रहा है। साथ ही साथ नई योजनाओं को तकनीक से जोड़कर लागू किया जा रहा है। इंटरनेट रोटी, कपड़ा और मकान की तरह दैनिक जीवन की मुख्य जरूरत बन चुका है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए गांवों को तेज गति के इंटरनेट से जोड़ा जा रहा है। 'किसान कॉल सेंटर' हो या 'एम–किसान संदेश सेवा' सभी डिजिटल मीडिया की देन हैं। सूचना–संचार तकनीक के माध्यम से कृषि के समावेशी विकास को सुनिश्चित करने के लिए नेशनल नॉलेज नेटवर्क के जरिए विभिन्न कृषि विज्ञान केन्द्रों को जोड़ा गया है।

भारत एक ऐसा देश है जहां की लगभग 60 फीसदी जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। पिछले एक दशक में भारत में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी ने तेजी से वृद्धि की है। जून 2015 में भारत में लगभग 35 करोड़ इंटरनेट प्रयोगकर्ता थे, जो देश की पूरी आबादी के 30 फीसदी के आसपास हैं। इन प्रयोगकर्ताओं में ग्रामीण क्षेत्रों से इंटरनेट प्रयोग करने वालों की संख्या पर गौर करें तो लगभग 14 करोड़ थे। इन आंकड़ों में प्रति क्षण इजाफा जारी है। सरकार की डिजिटल इंडिया जैसी योजनाएं ग्रामीण अंचलों में इंटरनेट की पहुंच को सुनिश्चित करने के लिए प्रतिबद्ध हैं। एक तरफ जहां ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट की सुविधा को मुहैया कराने की चुनौती है तो वहीं दूसरी ओर इसके प्रयोग को सुनिश्चित करने की। ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाली अधिकतर जनसंख्या कृषि पर निर्भर करती है। कृषि मुख्य रोजगार के तौर पर है। ऐसे में जरूरत महसूस की गई तकनीक के जरिए कृषि सेवाओं के विकास की। कृषि को तकनीक से जोड़कर उन्नत फसल की पैदावार के लिए सरकार ने इससे जुड़ी कई योजनाओं का क्रियान्वयन शुरू किया है। सरकार नेशनल ई–गवर्नेंस प्लान इन एग्रीकल्चर पूरे देश में लागू कर रही है। इस योजना का उद्देश्य पूरे भारत में सूचना–संचार प्रौद्योगिकी के माध्यम से कृषि विकास को गति देना है।

सर्वप्रथम ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में सन् 2010–11 में मिशन मोड प्रोजेक्ट शुरू किया गया था, जिसके अंतर्गत सात राज्य असम, हिमाचल प्रदेश, झारखण्ड, केरल, कर्नाटक, महाराष्ट्र एवं मध्यप्रदेश चुने गए थे। वर्ष 2014–15 में इस प्रोजेक्ट का विस्तार करते हुए शेष 22 राज्यों एवं 7 केंद्रशासित प्रदेशों में भी लागू कर दिया गया है। इसके तहत कृषि विज्ञान केंद्र, टच स्क्रीन कियोस्क (बूथ), एग्री–क्लिनिक, कॉमन सर्विस सेंटर, किसान कॉल सेंटर जैसी सुविधाओं को मुहैया करना है। इन सुविधाओं के विकास में टेलीकम्युनिकेशन आधारित तकनीक ने अहम् भूमिका निभाई है। एम–किसान, फार्मर्स पोर्टल, बीमा पोर्टल, किसान नॉलेज मैनेजमेंट प्रणाली आदि कृषि को उन्नत बनाने हेतु सहभागिता कर रही हैं। कृषि विभाग ने नेशनल इन्फार्मेटिक्स सेंटर के साथ मिलकर 80 पोर्टल विकसित किए हैं। इन पोर्टल्स का उद्देश्य कृषि रूपी रोजगार से जुड़े किसानों को फसलों के संबंध में विश्वस्तरीय जानकारी मुहैया करना है। मृदा परीक्षण, जल परीक्षण, विभिन्न प्रकार के उर्वरकों के प्रयोग एवं मात्रा की जानकारी एवं सब्सिडी संबंधी योजनाओं के सम्बन्ध में जागरुकता फैलाने में सूचना एवं संचार तकनीक का कारगर प्रयोग किया जा रहा है, जिससे कृषि कल्याणकारी योजनाओं का डिजिटलाइजेशन हो रहा है।

कृषि पुनर्वास में डिजिटल तकनीक के बढ़ते प्रयोग से योजनाओं के क्रियान्वयन में बढ़ती पारदर्शिता से भी इंकार नहीं किया जा सकता है। वर्तमान में विभिन्न प्रकार की सब्सिडी के भुगतान बैंक खातों के माध्यम से किए जा रहे है, जिसमें पैसा सीधे किसान के खाते में आ रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में भी बैंकों में हुए डिजिटलाइजेशन से भुगतान में निम्न स्तर पर भी हो रही देरी के बारे में भी जानना आसान हो गया है। इस तरह के अनुप्रयोगों से पारदर्शिता बढ़ रही है। प्रदूषण के बढ़ते स्तर एवं प्राकृतिक संसाधनों के बढ़ते शोषण से मौसम परिवर्तन में अनियमितता आई है। कभी बहुत अधिक बारिश होती है तो कभी सूखा पड़ जाता है। कभी अत्यधिक ठंड और पाला पड़ता है तो कभी कम ठंड फसल को प्रभावित करती है। पिछले वर्ष ओलावृष्टि के कारण उत्तर भारत में खरीफ की अधिकतर फसल खराब हो गई थी। जबकि इस वर्ष पड़ रही कम ठंड ने रबी की फसल को प्रभावित किया है। भारत सरकार ने फसलों के बढ़ते नुकसान को देखते हुए प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना को मंजूरी दी है, जिसमें किसानों को खरीफ की फसल के लिए बीमा कंपनियों द्वारा निर्धारित प्रीमियम का 2 प्रतिशत एवं रबी की फसल के लिए 1.5 यानी डेढ़ प्रतिशत प्रीमियम ही देना होगा। बागवानी संबंधी फसलों के लिए किसान को 5 प्रतिशत प्रीमियम देना पड़ेगा। इस फसल बीमा योजना की नियमावली के अनुसार फसल खराब होने पर स्मार्टफोन के जरिए सम्बंधित अधिकारी को फोटो भेज कर

दावा प्रस्तुत किया जा सकता है। इस सम्बन्ध में फसल बीमा मोबाइल एप भी शुरू किया गया है। फसल बीमा से लगभग 55 फीसदी कृषि क्षेत्र को लाभ मिलने की उम्मीद जताई जा रही है। अभी तक फसलों के संबंध में लागू राष्ट्रीय बीमा योजना से लगभग 23 फीसदी कृषि ही बीमित थी।

अक्सर सुनने में आता है कि किसान को उसकी फसल का उचित दाम नहीं मिलता है। इसका एक कारण किसान के पास बाजार भाव की कमी भी होती है। इस सम्बन्ध में केंद्रीय सरकार ने पहल करते हुए एक स्मार्टफोन एप शुरू किया है जो बाजार भाव के विषय में किसान को सूचित करने हेतु विकसित किया गया है। एग्री–मार्केट नामक मोबाइल एप डिवाइस की लोकेशन के 50 किलोमीटर के दायरे में चल रहे अनाज के बाजार भाव की ताजा जानकारी मुहैया करता है। यह मोबाइल एप स्वयं ही मोबाइल के लोकेशन से अवगत होकर मोबाइल के 50 किलोमीटर के दायरे में चल रहे विभिन्न अनाजों के बाजार भाव की जानकारी प्रदान करता है। यह एप एगमार्कनेट पोर्टल द्वारा प्रदान की जा रही सूचनाओं का संप्रेषण करता है।

किसानों की फसल से सम्बंधित समस्याओं के निदान के लिए किसान कॉल सेंटर का प्रसार किया गया है। उक्त कॉल सेंटर कार्यालयी समय सुबह 10 बजे से शाम 5 बजे तक टोल फ्री टेलीकॉम सेवा के द्वारा जानकारी प्रदान करते हैं। इन कॉल सेंटर के द्वारा किसानों को फसल से सम्बंधित समस्याओं पर विशेषज्ञों के द्वारा परामर्श प्रदान किया जाता है। इस तरह की सेवाओं के विकास से कृषि कार्य से जुड़ी सभी जानकारियों का निदान टेलीफोन पर वार्तालाप से हो पाना मुमकिन हो सका है। एसएमएस पोर्टल या एम–किसान पोर्टल किसानों को उनकी स्थानीय भाषा में सन्देश संप्रेषित करते हैं। इस सेवा का प्रयोग सूचना, सेवा एवं परामर्श तीन कार्यों के लिए किया जा रहा है। किसान उक्त सेवा का लाभ उठाने के लिए राज्य, जिला एवं ब्लॉक–स्तर पर कृषि, बागवानी, पशुपालन एवं मत्स्य पालन से संबंधित जानकारी के लिए खुद के मोबाइल नंबर को रजिस्टर करके कर सकते हैं। वर्तमान में लगभग 2 करोड़ किसान इस सेवा से लाभान्वित हो रहे हैं। डिजिटल तकनीक से किसानों के जुड़ाव को बढ़ा कर कृषि साक्षरता को बढ़ाना आसान कार्य नजर आता है। इसी क्रम में किसान ज्ञान मैनेजमेंट सिस्टम पोर्टल कृषि साक्षरता में अहम् भूमिका का निर्वहन कर रहा है।

कृषि जोकि जीवकोपार्जन का एक साधन थी, आज व्यवसाय का रूप धारण करती जा रही है। इसमें आज नई–नई तकनीकों के प्रयोग का चलन बढ़ रहा है। चाहे वह बीज हो, उर्वरक या फिर उपकरण सभी आधुनिकता और तकनीकी रूप से विकसित हो रहे हैं। इन तमाम उपकरणों एवं नई कृषि तकनीकों के विषय में डिजिटल मीडिया के जरिए किसान आसानी से जानकारी प्राप्त कर पा रहे हैं। बहुफसली उपजों के विषय में किसानों को विभिन्न पोर्टलों के द्वारा तथा संदेश सेवा के जरिए विभिन्न जानकारियां मुहैया कराई जा रही हैं। साथ ही मधुमक्खी पालन, मुर्गीपालन, मछली पालन एवं बागवानी फसलों जैसे अतिरिक्त आय को बढ़ाने वाले नुस्खे भी सुझाए जा रहे हैं। कृषि से संबंधित शोधों को बढ़ावा देने के लिए केंद्र सरकार ने सभी कृषि शोध संस्थानों को नेशनल नॉलेज नेटवर्क से जोड़ने का कार्य किया है। सरकार की इस पहल से देश–विदेश में कृषि से संबंधित हो रहे विभिन्न शोधों के विषय में सूचनाओं का प्रसार आसान हुआ है। विश्व पटल पर कृषि पैदावार को बढ़ाने संबंधी योजनाओं एवं तकनीकों के विषय में विमर्श के लिए वीडियो कांफ्रेंसिंग जैसी डिजिटल मीडिया की एप्लीकेशंस विशेषज्ञों को सहूलियत प्रदान कर रहे हैं। इस तरह के तमाम उदाहरणों से यह बात स्पष्ट होती है कि वर्तमान में डिजिटल मीडिया कृषि विकास का उत्प्रेरक बन रहा है।

मीडिया कन्वर्जेंस के दौर में अब मुद्रित, श्रव्य और दृश्य–श्रव्य माध्यम ऑनलाइन मीडिया पर शिफ्ट हो रहे हैं। ई–कम्युनिकेशन, ई–गवर्नेंस एवं ई–कॉमर्स के विस्तार ने निजी एवं व्यावसायिक दोनों प्रकार की कार्यप्रणाली में बड़े बदलाव किए हैं। ऐसे में कृषि संबंधी योजनाओं का डिजिटलाइजेशन एक सकारात्मक कदम प्रतीत होता है। कृषि के समावेशी विकास रथ को गति देने के लिए केंद्र सरकार जहां एक ओर इंटरनेट की पहुंच को गांव के दूरदराज के इलाकों में सुनिश्चित करने के लिए प्रयासरत है, वहीं दूसरी ओर कृषि कार्य में इसके अनुप्रयोग को सुनिश्चित करने के भी प्रयास किए जा रहे हैं। हाल ही में मंजूर की गई प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना हो या कृषि विभाग द्वारा संचालित किए जा रहे किसान कॉल सेंटर, सभी डिजिटल तकनीक कृषि में अनुप्रयोग की बात को प्रदर्शित करते हैं। कृषि उत्पादों के बाजार भाव की जानकारी देने के लिए विकसित किया गया मोबाइल एप या फिर बीमा योजना से संबंधित मोबाइल एप, सभी कृषि संबंधी सूचना जरूरतों को पूरा करने के लिए तत्पर हैं। वास्तविकता तो यह है कि भारत में कृषि विकास की चाबी अब सूचना एवं संचार तकनीक बन रही है। विभिन्न योजनाओं एवं उदाहरणों से यह बात स्पष्ट है कि सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी भविष्य में कृषि गवर्नेंस की राह को और ज्यादा आसान बना सकती है।

(लेखकगण वर्धमान महावीर मुक्त विवि, कोटा में पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग के शोधार्थी एवं स्वतंत्र पत्रकार हैं। विकास संबंधी मुद्दों पर लिखते हैं। डिजिटल मीडिया, न्यू मीडिया, वेब पत्रकारिता, ग्रामीण विकास, कृषि एवं परंपरागत उद्योग उनकी रुचि के विषय हैं।)

ई–मेलः umashankarm2@gmail.com

कृषि क्षेत्र में सरकार के नए प्रयास और उनका प्रभाव

–विष्णु नारायण

किसानों की अगर बुनियादी जरूरतें पूरी कर दी जाएं तो उनके लिए खेती करना न केवल आसान हो जाएगा बल्कि खेती एक ऐसे व्यवसाय का रूप ले लेगी जिसके मुनाफे के कारण किसानों और उनके परिवारों की आर्थिक और सामाजिक स्थिति में भी सुधार देखने को मिलेगा। ज्यादातर गरीब किसान अपने बच्चों को सिर्फ इसीलिए अच्छे स्कूल नहीं भेज पाते हैं क्योंकि उन्हें यह पता नहीं होता है कि पैदावार अच्छी होगी या खराब, उनके अनाज की बिक्री बाजारों में सही मूल्य पर हो पाएगी या नहीं। इन्हीं बातों को ध्यान में रखते हुए सरकार ने कुछ ऐसी योजनाएं बनाई हैं या बनाने की दिशा में है जो न केवल किसानों को कृषि की आधुनिक पद्धति की जानकारी दे बल्कि समय-समय पर खेती से जुड़ी जरूरतों को भी पूरा करें।

हम सभी हमारे बचपन के दिनों से ही पाठ्यपुस्तकों और जनसंचार माध्यमों से ये पढ़ते–सुनते रहे हैं कि भारत एक कृषि प्रधान देश है। हमारे देश की खुशहाली का रास्ता खेतों–खलिहानों और गांवों से होकर गुजरता है। आज भी हमारे देश की दो तिहाई जनसंख्या अपनी आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर है। कृषि हमारे देश की अर्थव्यवस्था की रीढ़ है और देश के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में कृषि का 17 प्रतिशत योगदान है।

देश की जनसंख्या का बड़ा हिस्सा आज भी कृषि में ही लगा हुआ है और वही उसके रोजगार का एकमात्र साधन भी है। लेकिन इतने लोगों को व्यवसाय देने वाला यह क्षेत्र हमेशा ही उपेक्षा का शिकार भी रहा है। अंग्रेजों के आने के बाद भारत में कृषि की समस्या लगातार विकराल रूप लेने लगी थी। किसानों की कमाई का बड़ा हिस्सा लगान चुकाने में ही चला जाता था, उसी असंतोष का नतीजा था कि किसानों ने आजादी की लड़ाई में बढ़–चढ़ कर हिस्सा लिया था। स्वतंत्रता संग्राम ने उन्हें यह आशा दी थी कि जब भारत के लोग खुद सत्ता में आएंगे तो उनकी समस्याएं दूर हो सकेंगी। आजादी के बाद की सरकार ने कृषि क्षेत्र और किसानों के विकास के लिए काफी योजनाएं बनाई और इस क्षेत्र में काफी सुधार भी किया। केंद्र सरकार और राज्य सरकारें कृषि पैदावार को बढ़ाने से लेकर अनाजों के लिए सुगम बाजार और अच्छे दाम दिलाने के लिए प्रयासरत रहे। लेकिन कृषि को अगर वर्तमान परिदृश्य में देखें तो हम पाते हैं कि हमारे देश में बड़ी जोत के किसान भी आज मजदूरी करने को विवश हैं। हमारे देश में ही महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश, तेलंगाना और विदर्भ जैसे इलाकों के किसान आए दिन सिर्फ आत्महत्या की वजह से अखबारों में जगह पाते हैं। उत्तर प्रदेश में बुंदेलखंड के किसानों की स्थिति बद से बदतर होती जा रही है। इन्हीं समस्याओं को देखते हुए और वर्तमान संकटों से

निपटने के लिए केंद्र सरकार ने कई तरह की योजनाएं चलाई हैं।

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना– हाल ही में केंद्र सरकार ने प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना शुरू की है। इस योजना की मांग किसान वर्षों से करते आ रहे हैं। इस बीमा योजना के तहत रबी की फसल पर प्रीमियम डेढ़ फीसदी होगा तो वहीं खरीफ के लिए यह प्रीमियम दो फीसदी तय किया गया है। गौरतलब है कि पहले यह बीमा प्रीमियम 15 फीसदी होता था। इस योजना के तहत कैपिंग का प्रावधान पूरी तरह हटा दिया गया है, जिससे किसानों को पूरा लाभ मिल सकेगा। इस योजना में कम प्रीमियम में ज्यादा जोखिम कवर होगा और ज्यादा सहायता दी जाएगी। फसल बीमा को व्यापक व समावेशी बनाते हुए इसे खेत में फसलों की बुवाई से खलिहान तक को समेटने की कोशिश की गई है। पोस्ट हार्वेस्टिंग में होने वाले नुकसान को भी शामिल किया गया है। बीमा क्लेम के लिए अब लंबे समय तक इंतजार नहीं करना होगा। ऐसा कई बार देखा जाता है कि किसानों तक बीमा के रुपये पहुंचने में सालों लग जाते हैं और वो किसान तब तक कर्ज में पूरी तरह डूब चुका होता है और बीमा का पैसा कर्ज चुकाने में ही खर्च हो जाता है। इस योजना में सरकार ने इसी बात पर खास ध्यान दिया है। अगर इस योजना का क्रियान्वयन सही होता है तो यह किसानों के खेती करने को न सिर्फ आसान बनाएगा बल्कि उनके अंदर के उस छुपे डर को भी निकाल फेंकेगा, जिसके कारण किसान फसलों पर ज्यादा पैसे खर्च करने से डरते हैं। इसके तहत प्राकृतिक आपदा के तुरंत बाद 25 फीसदी क्लेम सीधा संबंधित किसानों के बैंक खाते में पहुंच जाएगा। वहीं बाकी का भुगतान नुकसान के आकलन के बाद किया जाएगा। इसमें फसलों की कटाई से प्राप्त आंकड़ा भी शामिल होगा। इसके लिए राजस्व विभाग के कर्मचारियों को स्मार्ट फोन भी मुहैया कराया जाएगा। इस योजना की सबसे बड़ी बात यह है कि इसमें प्राकृतिक आपदाओं से होने वाले नुकसान के साथ स्थानीय आपदाओं को भी जोड़ लिया गया है। ओलावृष्टि और बेमौसम बारिश अथवा आंधी–तूफान से स्थानीय–स्तर पर होने वाले नुकसान पर भी बीमा का भुगतान किया जाएगा। इस योजना पर इस वर्ष 17,600 करोड़ रुपये खर्च का अनुमान है। केंद्र ने 8,800 करोड़ रुपये मंजूर किए हैं। इतनी ही रकम राज्य सरकारें देंगी। फिलवक्त कर्ज लेने वाले किसानों के लिए फसल बीमा लेना जरूरी रखा गया है।

फसल बीमा के अलावा किसानों के लिए सिंचाई की पर्याप्त व्यवस्था करना संकट का विषय रहा है। ऐसा तो हम हमेशा से ही सुनते आए हैं कि किसी भी खेत में सिर्फ पटवन की सुविधा मात्र से ही उस खेत की उत्पादक क्षमता लगभग दुगुनी हो जाती है। किसानों के खेतों तक नहरों का न पहुंचना और बिजली की समस्या के अलावा सिंचाई को बदलते वैश्विक परिदृश्य और जलवायु परिवर्तन ने और भी भयावह बना दिया है। मौसम लगातार बदल रहा है, जब किसान के खेतों को सबसे ज्यादा बारिश की जरूरत होती है तो वर्षा कहीं गायब–सी हो जाती है। दो सालों से देश में सूखे का संकट लगातार बढ़ता जा रहा है। वो तो किसानों का अदम्य साहस और खेतों से उनका लगाव है जिसके बलबूते वे आज भी इस व्यवसाय में न सिर्फ लगे हुए हैं बल्कि वे जी–तोड़ मेहनत करके समस्त देशवासियों का पेट भर रहे हैं। वे जिन फसलों की खेती कर रहे हैं वो अनाज तक उन्हें खाने के लिए उपलब्ध नहीं हो पा रहे हैं। दलहन फसलें इसका सबसे बड़ा उदाहरण हैं। किसानों की थालियों से दाल कब की गायब हो चुकी है। सिंचाई की इन्हीं तमाम दिक्कतों व परेशानियों को ध्यान में रखते हुए वर्तमान केंद्र सरकार ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की अध्यक्षता में केंद्रीय मंत्रिमंडल की बैठक में 'प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना' को मंजूरी दी है। इसके महत्वपूर्ण बिंदु निम्नलिखित हैं–

- इस योजना के अंतर्गत कृषि जलवायु की दशाओं और पानी की उपलब्धता के आधार पर जिला और राज्य–स्तरीय योजनाएं बनायी जाएंगी।
- इस योजना का उद्देश्य देश के हर खेत तक किसी न किसी माध्यम से सिंचाई की सुविधा सुनिश्चित करना है ताकि 'प्रति बूंद और अधिक फसल' ली जा सके।
- इस योजना के तहत मौजूदा वित्तीय वर्ष में 1000 करोड़ रुपये का आवंटन किया गया है। इस योजना में हर खेत तक सिंचाई का जल पहुंचाना और इसके कार्यान्वयन की प्रक्रिया में राज्यों को अधिक धन इस्तेमाल करने की लचीली सुविधा व स्वायतत्ता दी गई है।
- इन परियोजनाओं के कार्यान्वयन के लिए राज्य कृषि विभाग नोडल एजेंसी के रूप में काम करेंगे। तो वहीं समय–समय पर समीक्षा के लिए अंतर–मंत्रालयी राष्ट्रीय संचालन समिति (एनएससी) होगी।
- इस योजना में केंद्र जहां 75 फीसदी अनुदान देगा तो वहीं 25 फीसदी खर्च राज्यों के जिम्मे होगा।
- पूर्वोत्तर क्षेत्र और पर्वतीय राज्यों में केंद्र का अनुदान 90 फीसदी तक होगा।

ये योजनाएं फसल उपज में मदद करेंगी। किसानों की समस्या सिर्फ सही मात्रा में फसल उपजाने तक ही सीमित नहीं है। अनाजों को बाजार तक ले जाने और अच्छा दाम पाने तक उन्हें काफी परेशानियों का सामना करना पड़ता है। किसानों को इस विषय में पर्याप्त जानकारियां न होने की वजह से स्थिति और भी जटिल हो जाती है। इससे भी निपटने के लिए सरकार के

कृषि मंत्री राधा मोहन सिंह ने किसानों को कृषि और टेक्नोलॉजी से रू ब रू कराने के लिए "एग्रीमार्केट और फसल बीमा" के नाम से मोबाइल ऐप लॉन्च किया है। यही नहीं, इसके अलावा भी वर्तमान सरकार टेक्नोलॉजी को किसानों तक पहुंचाने के लिए अतिरिक्त प्रयास कर रही है।

इसके साथ ही किसानों की शिकायतों का निराकरण करने हेतु भी एक पहल की गई है। इसके लिए Centralized Public Grievance Redress and Monitoring System (CPGRAMS) के नाम से एक वेब पोर्टल की भी शुरुआत की है। यहां किसान खुद या उनसे संबंधित संस्थाएं खुद को रजिस्टर कराके अपनी दिक्कतों और परेशानियों के बारे में सरकार को रू ब रू करा सकती हैं।

कोई भी देश तभी खुशहाल रह सकता है जब वहां की कृषि व्यवस्था और किसान अच्छी स्थिति में हों। हमारे देश पर भी यही बात लागू होती है। अभी भी हमारे देश में लाखों लोग ऐसे हैं जिन्हें दो वक्त का खाना भी ठीक से नसीब नहीं होता है।

इसी स्थिति को समझते हुए भारत में हरितक्रांति के जनक डॉ स्वामीनाथन ने कहा कि वे कृषि को भारतीय अर्थव्यवस्था की धुरी बनाने हेतु प्रतिबद्ध हैं। वे कहते हैं कि हमारे देश की 60 करोड़ जनसंख्या आज प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कृषि से जुड़ी हुई है। वे कृषि को देश का सबसे बड़ा निजी उपक्रम मानते हैं। डॉ स्वामीनाथन कहते हैं कि कृषि 10,000 साल पुराना उद्योग है, जिसका इतिहास मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की संस्कृति तक जाता है। यही नहीं, उनका मानना है कि सिर्फ और सिर्फ कृषि के भीतर ही वो क्षमता है जिससे हमारा देश समावेशी विकास के साथ आगे बढ़ सकता है। इसके लिए जरूरत है कि हम कृषि को रोजगार से जोड़ें। इसके लिए सरकार को भी चाहिए कि वे औद्योगिक घरानों को सब्सिडी देने के साथ–साथ खेती–किसानी में जुड़ी 70 फीसदी जनसंख्या के प्रति सहयोगात्मक रवैया रखे।

इन्हीं बातों पर ध्यान देते हुए कृषि की बेहतरी के कई और अहम प्रयास किए गए हैं उसके कुछ अहम बिंदु ये हैं–

- नाबार्ड के ग्रामीण अवसंरचना विकास कोष को वित्तीय वर्ष 2015–16 में 25,000 करोड़ रुपये आवंटित किए गए हैं। इसके अलावा कुछ अतिरिक्त फंड भी सरकार ने आवंटित किए हैं।
- लंबी अवधि के ग्रामीण क्रेडिट फंड के तहत वित्तीय वर्ष 2015–16 में 15,000 करोड़ रुपये आवंटित किए गए हैं।
- लघु अवधि को–ऑपरेटिव ग्रामीण ऋण पुर्नवित्त कोष के तहत वित्तीय वर्ष 2015–16 में 45,000 करोड़ रुपये आवंटित किए गए हैं।
- लघु अवधि के आर. आर. बी पुर्नवित्त फंड के तहत 15,000 करोड़ रुपये आवंटित किए गए हैं।

अन्य महत्वपूर्ण कदम

फर्टिलाइजर प्लांट खोलने की घोषणा – इस देश के किसान हमेशा शिकायत करते हैं कि उन्हें खेती में उपयोग होने वाली खाद या पोषक तत्व समय से नहीं मिल पाता है। बड़े पैमाने पर यह देखा जाता है कि फसल रोपण के समय से लेकर उसके तैयार होने तक जिन खादों की जरूरत फसलों को होती है, वो मार्केट से गायब हो जाते हैं और यहीं से शुरू होती है इनकी कालाबाजारी। इसके चलते खादों के दाम काफी बढ़ जाते हैं। अगर आप किसी सुदूर गांव जाएंगे तो देखेंगे कि वहां के किसान सही समय पर उर्वरक नहीं मिलने के कारण या महंगे होने के कारण खेती करना बंद कर चुके हैं। इन्हीं समस्याओं से निपटने के लिए भारत सरकार ने बंद पड़े चार फर्टिलाइजर्स प्लांट को दोबारा शुरू करने का निर्णय लिया है और कृषि में उपयोगिता रखने वाले पोषक तत्व पैदा करने के लिए नए दो प्लांट भी शुरू करने वाली है। इनके लिए करीब 50,000 करोड़ रुपये की राशि खर्च करने का निर्णय लिया गया है।

वेयरहाउस इंफ्रास्ट्रक्चर सुधार के लिए राशि देने का वायदा – अनाजों का ठीक ढंग से रखरखाव नहीं होने के कारण हर साल लाखों टन अनाज सड़ जाता है। अनाज के सड़ने के कारण राजस्व घाटा भी होता है। हमारे देश में अनाज को सुरक्षित रखने के लिए वेयरहाउसेज (अनाज गृह) की भारी कमी है। इस स्थिति

में सुधार करने के लिए सरकार ने नए अनाज गृहों को बनाने से लेकर पुराने अनाज गृहों के नवीनीकरण के लिए भी 5,000 करोड़ रुपये देने का वायदा किया है। अगर इस राशि का सही उपयोग किया जाता है तो अनाज को सुरक्षित रखने से लेकर उसकी सप्लाई में मदद मिल सकती है।

रिसर्च के लिए इंस्टीट्यूट और विश्वविद्यालयों की स्थापना – हमारे देश में किसी विषय में भी रिसर्च की स्थिति संतोषजनक नहीं है लेकिन अगर बात कृषि की हो तो मामला और भी गंभीर हो जाता है। देश में कुछ ही गिने–चुने विश्वविद्यालय या संस्थान हैं जहां कृषि या किसानों की समस्याओं पर रिसर्च हो रहा है। ऐसे में यहां कृषि विश्वविद्यालयों और संस्थाओं की स्थापना करने की सख्त जरूरत है। इन्हीं जरूरतों को ध्यान में रखते हुए केंद्र सरकार ने दिल्ली स्थित पूसा एग्रीकल्चरल रिसर्च इंस्टीट्यूट की तर्ज पर दो इंस्टीट्यूट खोलने का फैसला किया हैं। ये इंस्टीट्यूट असम और झारखंड में खोले जाएंगे। इंस्टीट्यूट खोलने में करीब 100 करोड़ रुपये का इन्वेस्टमेंट करने की घोषणा की गई थी। इसके अलावा आंध्र प्रदेश और राजस्थान में कृषि विश्वविद्यालय खोलने सहित हॉर्टिकल्चर विश्वविद्यालय की स्थापना तेलंगाना और हरियाणा में करने की बात भी हुई है। इन संस्थानों और विश्वविद्यालयों में मुख्यत; अनाजों की पैदावार को बढ़ाने के लिए रिसर्च होगा।

किसान चैनल की स्थापना – आज के समय में सफल होने के लिए नई सूचनाओं से अवगत होना बहुत जरूरी हो गया है और यह बात किसानों पर भी लागू होती है। वे किसान ही खेती में आगे बढ़ सकते हैं जो कृषि की नई तकनीकों और कार्यप्रणाली से अवगत होंगे। कृषि की पैदावार बढ़ाने से लेकर फसलों की रोपाई और कटाई तक हर चीज में नवीन आविष्कार हो रहे हैं। देश के किसान कृषि क्षेत्र की नई जानकारियों और प्रणालियों से अवगत हों इसके लिए सरकार ने किसान चैनल की स्थापना की है। इस चैनल पर खेतीबाड़ी से लेकर बागवानी तक के बारे में बताया जाता है। इस चैनल का मुख्य काम किसानों को मौसम, फसल की बुआई, कटाई और मार्केट में अनाजों की कीमतों की जानकारियां देना है। इस चैनल को चालू हुए अभी एक साल ही हुआ है। इस चैनल से किसानों का कितना फायदा हुआ है, यह तो आने वाला समय ही बता पाएगा।

मृदा परीक्षण के लिए हेल्थ कार्ड स्कीम – इस स्कीम के तहत किसानों को एक ऐसा कार्ड दिया जाता है जिसमें फसलों के हिसाब से उर्वरक के बारे में बताया जाएगा। उसमें यह भी जानकारी दी जाती है कि किस प्रकार की मिट्टी में कैसा उर्वरक उपयोग किया जा सकता है। तीन सालों में 14 करोड़ किसानों तक पहुंचकर जानकारी देना इस स्कीम का मुख्य लक्ष्य रखा गया था। इसके अलावा इस कार्ड की मदद से यह भी पता लगाया जा सकता है कि उपजाऊ भूमि में अधिक मात्रा में उर्वरक डालना कैसे उसे नुकसान पहुंचा सकता है।

वैसे तो आम आदमी और खासतौर पर खेती–किसानी करने वाली जमात को आम बजट हमेशा आंकड़ों की बाजीगरी ही लगती है। आज जरूरत है कि हमारे देश में किसानों की समस्याओं को नजर में रखते हुए कुछ देशी उपायों को बढ़ावा मिले ताकि हम अधिक तेजी से सारी समस्याओं को चिन्हित कर उनका निराकरण कर सकें।

समय–समय पर विभिन्न समाजसेवी संस्थाओं के अलावा कृषि पर स्वतंत्र रूप से काम करने वाले और सामाजिक सरोकार रखने वाले लोग केंद्रीय आम बजट के इतर कृषि बजट की भी मांग करते रहे हैं। इस पूरे मामले पर स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने सन् 1947 में कहा था कि दूसरी हर बात इंतजार कर सकती है किन्तु खेती नहीं। उनके द्वारा कही गई बात आज भी उतनी ही प्रासंगिक है जितनी आज से कई दशक पहले हुआ करती थी। आज भी अधिकांश गरीब लोग ग्रामीण भारत का हिस्सा हैं जो आजीविका के लिए खेती पर निर्भर हैं। ऐसे में जरूरत है योजनाओं के सही ढ़ंग से क्रियान्वयन की। हमारे देश की सबसे बड़ी विडंबना यह है कि यहां सरकारों की ओर से योजनाएं तो काफी बनती हैं लेकिन उनमें से ज्यादातर सफल नहीं हो पाती हैं। इनकी असफलता के पीछे की मुख्य वजह रणनीति और इच्छाशक्ति का अभाव होना है। किसानों की समस्याएं साल–दर–साल बढ़ती ही जा रही हैं। खासकर के किसान जो नगदी फसलों की बुआई करते हैं, उनकी हालत खराब होती जा रही है। किसानों द्वारा किए जा रहे आत्महत्या के आंकड़े इस बात के गवाह हैं कि कृषि क्षेत्र में बड़े बदलाव की जरूरत है।

ये बदलाव जलवायु संकट को ध्यान में रखते हुए होने चाहिए। कभी सूखा, कभी बाढ़ तो कभी ओला वृष्टि ये तीन चीज ऐसी हैं जिसके कारण फसलों को सबसे ज्यादा नुकसान होता है। किसानों को सिर्फ फसल का मुआवजा देकर स्थिति संभालने के दावे करना उचित नहीं होगा क्योंकि मुआवजा किसान के नुकसान की भरपाई कभी भी नहीं कर पाता है। इसके लिए जरूरत है कि देश में किसानों के लिए एक ऐसा माहौल तैयार किया जाए, जिसमें उन्हें लगे कि सरकार या राज्य द्वारा चलाई जा रही संस्थाएं उनकी समस्याओं को दूर करने के लिए प्रयासरत हैं।

(लेखक जर्मन में बी.एच.यू से स्नातक तथा भारतीय जनसंचार संस्थान से हिंदी पत्रकारिता में डिप्लोमा करने के बाद स्वतंत्र पत्रकार के रूप में विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में विकास संबंधी मुद्दों पर लिखते हैं।)

ई–मेलः narayanrockz@gmail.com

कृषि विकास की नवीनतम तकनीकें

—डॉ.वीरेन्द्र कुमार

वर्तमान कृषि व्यवस्था में कृषि उत्पादन को अधिकतम करने, कृषि से होने वाली आय को बढ़ाने तथा जैविक और अजैविक दबावों के समाधान की आवश्यकता है ताकि किसानों का उत्साह कृषि में बना रहे। कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्र को विकसित करने के लिए नवीनतम तकनीकों का प्रयोग करने की सख्त जरूरत है। साथ ही, नवीनतम व विकसित तकनीक को किसानों तक पहुंचाने के लिए जोर देने की जरूरत हैं जिससे किसान नई तकनीकी को अपनाकर अधिक लाभ कमा सकें और अपना जीवन खुशहाल बना सकें। साथ ही देश तरक्की कर सके।

भारत की खाद्य, पोषण और आजीविका सुरक्षा के लिए कृषि आज भी महत्वपूर्ण बनी हुई है। पिछले दो दशकों से किसानों को फसलों की उपज में आए ठहराव, मृदा स्वास्थ्य में गिरावट, कृषि मदों की बढ़ती कीमतें और जलवायु परिवर्तन जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। इसके अलावा किसान घटती उत्पादकता, आधुनिक कृषि प्रौद्योगिकी की कमी, फसल विविधिकरण की कमी और खेती से कम मुनाफा आदि का सामना कर रहे हैं। साथ ही अनुकूल बाजार परिस्थितियों की कमी, प्रभावी न्यूनतम समर्थन मूल्य का अभाव, उचित खरीद व्यवस्था का अभाव एवं उत्पादन के लिए सरल ऋण प्रक्रिया का अभाव, उचित भंडारण व्यवस्था की कमी एवं कटाई उपरांत उपर्युक्त प्रसंस्करण तकनीकी व उन्नत मशीनों का अभाव आदि कारक भी फसलों के उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। सामाजिक—आर्थिक कारण भी फसल उत्पादन को प्रभावित करते हैं। छोटे एवं सीमांत किसानों की आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण खेती में प्रयोग होने वाले महंगे रासायनिक उर्वरक, कीटनाशी व उन्नतशील संकर बीज की खरीद उनकी पहुंच से बाहर होती है।

कृषि विकास को बढ़ावा देने के लिए हाल ही में रांची में भारतीय पादप जैव प्रौद्योगिकी संस्थान भी खोला गया है। इसके अलावा कृषि शिक्षा के विकास के लिए उत्तर प्रदेश के झांसी जिले मे केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय व झारखंड के हजारीबाग में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान की स्थापना की गई है। गत वर्ष मौसम की मार ने किसानों को बेहाल कर दिया था। मानसून का मिजाज बिगड़ने का सीधा असर भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर पड़ता है। पिछले साल भी बेमौसम बारिश और ओलों के पड़ने से देश के ज्यादातर इलाकों में रबी की फसलें बर्बाद हो गई थी। तब

गेहूं, चना व सरसों की फसल को सबसे ज्यादा नुकसान पहुंचा था। गत वर्ष दिसंबर माह में सर्दी कम पड़ने से गेहूं व आलू उगाने वाले किसान परेशान थे। परन्तु जनवरी माह में नमीयुक्त और सर्द हवाओं ने रबी की फसलों के लिए संजीवनी का काम किया है। गेहूं की अच्छी वृद्धि और विकास के लिए जनवरी में 15 डिग्री सेल्सियस से ज्यादा तापमान नहीं होना चाहिए। इसी प्रकार आलू की वृद्धि और विकास के लिए 10 डिग्री से कम न्यूनतम और 20 डिग्री से कम अधिकतम तापमान उपयुक्त होता है। साथ ही अधिक तापमान होने से कंदों की वृद्धि और फैलाव पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इन बदलावों से खाद्यान्न में हमारी आत्मनिर्भरता प्रभावित हो सकती है। इसकी वजह से पैदा हुई भयानक भुखमरी, कुपोषण, सूखा, फसलों की बर्बादी, अकाल, महंगाई, गरीबी, बेरोजगारी, सामाजिक असुरक्षा और मानसिक तनाव दुनिया के लिए अशांति और असुरक्षा की वजह बन जाते हैं।

खाद्य एवं कृषि सगंठन व अन्य राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं के लिए मृदा और जल जैसे संसाधनों का सरंक्षण चिंता का विषय है। वर्तमान कृषि व्यवस्था में कृषि उत्पादन को अधिकतम करने, कृषि से होने वाली आय को बढ़ाने तथा जैविक और अजैविक दबावों के समाधान की आवश्यकता है, ताकि किसानों का उत्साह कृषि में बना रहे। कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्र को विकसित करने के लिए नवीनतम तकनीकों का प्रयोग करने की सख्त जरूरत है जिनमें से प्रमुख कृषि तकनीकों का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है–

पूसा एसटीएफआर मीटर – हाल ही में माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने फरवरी 2015 को राजस्थान के सूरतगढ़ में किसानों को मृदा स्वास्थ्य कार्ड देने की शुरुआत की है। इसी क्रम में सॉयल टेस्ट फर्टिलाइजर रिकमेंडेशन मीटर (पूसा एसटीएफआर मीटर) का आविष्कार किया गया है। हमारे देश की मृदाएं कई मुख्य व सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी से ग्रसित हैं। साथ ही कृषि जोतों की बड़ी संख्या होने के कारण मृदा परीक्षण सेवा पर्याप्त व सुगमता से उपलब्ध नहीं है। किसान भाई प्रायः वैज्ञानिक सिफारिशों के अभाव में रासायनिक उर्वरकों का अत्यधिक, असंतुलित व अंधाधुंध इस्तेमाल करते हैं। इससे न केवल उत्पादन लागत में बढ़ोतरी होती है, बल्कि शुद्ध लाभ में कमी तथा मृदा स्वास्थ्य में गिरावट आ जाती है। इस संबंध में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा पूसा सॉयल टेस्ट फर्टिलाइजर रिकमेंडेशन मीटर नामक यंत्र विकसित किया गया है। इसके द्वारा मृदा के पांच गुणों जैसे मृदा पी.एच., विद्युत चालकता, कार्बनिक कार्बन, मृदा में उपलब्ध फॉस्फोरस एवं पोटाश का निर्धारण किया जा सकता है। यह मृदा परीक्षण के साथ–साथ फसलों के लिए उर्वरकों की संस्तुति भी दर्शाता है। साथ ही इसका प्रयोग व कार्यविधि भी सरल व सुगम है। इसके प्रयोग के लिए केवल 2–3 दिन का प्रशिक्षण लेने के बाद किसान स्वयं ही मृदा परीक्षण कर सकते हैं। जहां अन्य मृदा परीक्षण किट मृदा गुणों की जानकारी केवल रंगों की गुणात्मक तुलना के आधार पर देते हैं, वही इस कलरीमीटर आधारित यंत्र से मृदा परीक्षण का सही–सही मात्रात्मक निर्धारण होता है। यह उन सभी क्षेत्रों के लिए अत्यधिक उपयोगी हैं जहां मृदा परीक्षण की सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं। ग्राम पंचायतें, सहकारी समितियां, किसान सेवा केन्द्र तथा गांवों में कार्यरत स्वयंसहायता समूह इसका उपयोग करके अपनी सेवाओं की गुणवत्ता में वृद्धि कर सकते हैं। इसके अलावा ग्रामीण शिक्षित बेरोजगार युवक/युवतियां इस उपकरण का उपयोग करके मिट्टी परीक्षण का व्यवसाय शुरू कर सकते हैं। पूसा संस्थान, नई दिल्ली में 19–21 मार्च, 2016 को किसान मेले इस उपकरण की प्रयोग विधि का जीवंत प्रदर्शन देखा जा सकता है।

अगेती आलू–पछेती गेहूं फसल प्रणाली – विश्व की सबसे ज्यादा उपयोग की जाने वाली सब्जियों में आलू का महत्वपूर्ण स्थान है। भारत में यह सबसे लोकप्रिय सब्जी है। आलू एक ऐसी सब्जी है, जिसे अधिकांश सब्जियों के साथ मिलाकर खाया जाता है। आलू को 'सब्जियों का राजा' भी कहा जाता है क्योंकि आलू में भरपूर औषधीय गुण समाहित हैं। आलू हमारे देश की महत्वपूर्ण सब्जी वाली फसलों में से एक है। भारत में आलू फसल विविधीकरण, ग्रामीण गरीबी उन्मूलन और खाद्य तथा पोषक सुरक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। आलू एक अत्यधिक उत्पादित फसल है जो देश में प्रचलित विभिन्न फसल प्रणालियों के साथ समायोजित हो सकती है। कम अवधि में तैयार होने व भोजन देने के साथ–साथ आलू पूरी दुनिया में रोजगार देने में भी अग्रणी रहा है। आलू कम लागत में अधिक मुनाफा देने वाली फसल है। यही कारण है कि किसान भाई आलू की खेती करके जहां भरपूर मुनाफा कमाते हैं वहीं छोटे किसानों के लिए यह दोहरा फायदा देती है। हिमाचल प्रदेश के शिमला में केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान ने कुफरी श्रेणी की अगेती किस्में विकसित करके आलू क्रांति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। कुफरी सूर्या उत्तर–पश्चिम भारत के सिंचित मैदानी क्षेत्रों में आलू की अगेती बुवाई हेतु उपयुक्त है। यह प्रजाति 100–110 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। आलू की अगेती प्रजातियों जैसे कुफरी सूर्या की बुवाई 15–25 सितम्बर के मध्य कर देनी चाहिए। ये प्रजातियां गर्मी के प्रति सहनशील हैं। अगेती आलू दिसम्बर के अन्त तक पककर तैयार हो जाता है। इसकी उपज 200–250 कुन्तल प्रति हेक्टेयर मिल जाती है। खुदाई उपरान्त पछेती गेहूं के लिए बीज की मात्रा 125 कि. ग्रा. प्रति हेक्टेयर रखनी चाहिए। उत्तर–पश्चिम भारत के मैदानी क्षेत्रों के लिए गेहूं की पछेती प्रजातियों में

राज–3765, राज–3777, पी.बी.डब्ल्यू.–373, डब्ल्यू एच.1021, डी.बी.16, यू.पी.–2425, पी.बी.डब्ल्यू.–590, एच.डी.–2643 व डब्ल्यू.आर.–544 शामिल हैं।

परिशुद्ध खेती की जरूरत – वर्तमान परिवेश में बढ़ते शहरीकरण, औद्योगिकीकरण और आधुनिकीकरण की वजह से कृषि योग्य भूमि का क्षेत्रफल दिनों–दिन घटता जा रहा है। भविष्य में इसके बढ़ने की सम्भावना नगण्य है। देश की बढ़ती आबादी की खाद्यान्न आपूर्ति के लिए प्राकृतिक संसाधनों का आवश्यकता से अधिक दोहन किया जा रहा है। जिसका नतीजा आज हम भूमि की उत्पादकता में ह्रास, भू–जल का गिरता स्तर, घटते जल स्रोतों, सिकुड़ती जैवविविधता, सूखे, बाढ़ों और जलवायु परिवर्तन के रूप में देख रहे हैं। यदि समय रहते हमने प्राकृतिक संसाधनों प्रमुख रूप से मृदा एवं जल संरक्षण पर विशेष जोर नहीं दिया तो भविष्य में गम्भीर खाद्य समस्या का सामना करना पड़ सकता है। इस सम्बन्ध में, मृदा उपजाऊपन एवं उत्पादकता बढ़ाने में परिशुद्ध खेती की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। ''परिशुद्ध खेती'' सूचना तकनीकी पर आधारित कृषि विज्ञान की एक आधुनिक अवधारणा है जो पर्यावरण हितैषी, किसानों के लिए उपयोगी तथा उत्पादन बढ़ाने की सम्भावनाओं के साथ–साथ प्राकृतिक संसाधनों के ऊपर से दबाब को कम करने में सहायक है''। इसमें खेत की स्थानीय जानकारी प्राप्त करने के लिए अत्याधुनिक तकनीकों जैसे जी.आई.एस., जी.पी.एस., रिमोट सेंसिंग पद्धति एवं सूचना तकनीक का प्रयोग किया जाता है। उर्पयुक्त सभी तंत्रों से सूचना एकत्रित कर लागत साधनों की मात्रा निर्धारित की जाती है। परिशुद्ध खेती को स्थान विशेष कृषि के नाम से भी जाना जाता है। इसमें लागत साधनों का अत्यधिक क्षमता से उपयोग होता है। परिशुद्ध खेती में लागत साधनों जैसे खाद व उर्वरक, सिंचाई, कीटनाशियों और शाकनाशियों आदि को उस स्थान विशेष पर ही प्रयोग किया जाता है, जहां फसल को उनकी अत्यधिक आवश्यकता होती है। जबकि पारम्परिक खेती में किसान पूरे खेत में उपर्युक्त साधनों का समान रूप से प्रयोग करते हैं जिसमें न केवल संसाधनों का दुरुपयोग होता है बल्कि मृदा उत्पादकता में कमी व उत्पादन लागत में वृद्धि के साथ–साथ पर्यावरण को भी नुकसान पहुंचता है। आने वाले समय में खाद्यान्न उत्पादन को बढ़ाने के लिए उत्पादन लागत को घटाना तथा उपलब्ध संसाधनों जैसे उर्वरक, सिंचाई जल, कीटनाशी इत्यादि के बेहतर उपयोग को सुनिश्चित करते हुए मृदा उत्पादकता एवं उर्वरता को बनाए रखना नितांत आवश्यक है।

परम्परागत कृषि विकास योजना – हाल ही में जैविक खेती को बढ़ावा देने और कृषि रसायनों पर निर्भरता को कम करने के लिए परम्परागत कृषि विकास योजना की शुरुआत की गई है। इससे न केवल उच्च गुणवत्तायुक्त, स्वास्थ्यवर्धक एवं पौष्टिक खाद्य पदार्थों की उपलब्धता बढ़ेगी, बल्कि खेती में उत्पादन लागत कम करने में भी मदद मिलेगी। साथ ही मृदा उर्वरता में सुधार के साथ–साथ किसानों की आमदनी में भी इजाफा होगा। किसानों को जैविक खेती के प्रति आकर्षित करने के लिए सरकार की ओर से अनेक योजनाएं चलायी जा रही हैं। इन योजनाओं के कारण ही जैविक खेती के अर्न्तगत क्षेत्रफल बढ़ रहा है। वर्ष 2003–04 में 42000 हेक्टेयर जैविक खेती का क्षेत्रफल था जो वर्ष 2013–14 में बढ़कर 7.23 लाख हेक्टेयर के लगभग पहुंच गया है।

खेसारी दाल की नई किस्मों का विकास – भारत में खेसारी दाल एक महत्वपूर्ण रबी फसल है। खेसारी दाल को 'गरीबों की दाल' भी कहा जाता है। खेसारी की फसल प्राकृतिक रूप से कठोर प्रकृति की है। अतः वातावरण की विपरीत परिस्थितियों में भी फसल प्रणाली में स्थायित्व प्रदान करने की क्षमता रखती है। खेसारी दाल की जो परम्परागत किस्में हैं, उसमें एक विषैला रसायन–बीटा एन आक्सलिल एल बीटा डाईएमिनोपिओनिक एसिड होता है। इसे ओड़ेप या ओडीएपी के नाम से भी जाना जाता है। कीमत में काफी कम होने के कारण महंगी दालों को न खरीद पाने वाले गरीब लोग उसे खा लिया करते थे। परन्तु जब इस दाल के कारण लोगों के नर्वस सिस्टम को नुकसान पहुंचने लगा और वह लकवे की चपेट में आने लगे तो सरकार ने खेसारी दाल को सेहत के लिए हानिकारक मानते हुए वर्ष 1961 में इस पर प्रतिबंध लगा दिया था। यद्यपि इस प्रतिबंध के बाद भी किसान गुपचुप तरीके से इसकी खेती करते रहे। साथ ही सस्ती दाल होने के कारण गरीब लोग इसका उपयोग करते रहे। कई दशकों बाद खेसारी दाल की खेती पर फिर चर्चा शुरू हो गई है। अब भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद् (आई सी एम आर) ने इसकी तीन प्रजातियों को हरी झंडी दी है। खेसारी की इन किस्मों में नर्वस सिस्टम को नुकसान पहुंचाने वाले तत्वों की मात्रा बहुत कम है। इन तीनों किस्मों का विकास भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

ने किया है। इन्हें रतन, प्रतीक और महातेओरा नाम दिए गए हैं। खेसारी की जो नई किस्में विकसित की गई हैं उनमें यह एसिड बहुत ही कम मात्रा में है। इनमें ओड़ेप की मात्रा 0.07 से 0.1 प्रतिशत के बीच है और यह मानवीय उपयोग के लिए सुरक्षित है। इन किस्मों को खेती के लिए जारी कर दिया गया है।

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन – एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन से तात्पर्य यह है कि पौधों को पोषक तत्व प्रदान करने वाले सभी संभव स्रोतों जैसे रासायनिक उर्वरक, जैविक खादें, जैविक उर्वरक, फसल अवशेष इत्यादि का कुशलतम समायोजन कर फसलों को संतुलित पोषण दिया जाए। एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन तकनीक पर्यावरण हितैषी और इनसे मुख्य पोषक तत्व भी पौधों को धीरे–धीरे व लम्बे समय तक प्राप्त होते रहते हैं। सघन फसल प्रणाली के अन्तर्गत फसलें मृदा से जितने पोषक तत्वों का अवशोषण करती हैं, उनकी क्षतिपूर्ति मृदा उर्वरता बनाए रखने के लिए अति आवश्यक है। पौधों को जिंक, लौह, तांबा, बोरोन, माल्बिडेनम, मैगनीज व क्लोरीन की बहुत कम मात्रा में आवश्यकता होती है। यदि फसल अवशेष व अन्य जैविक खादों का नियमित प्रयोग होता रहे तो पौधों को इन तत्वों के अतिरिक्त पोटाश की भी कमी नहीं रहती है। फास्फोरस की कमी जीवाणु खाद द्वारा बीज का जीवाणु उपचार करके पूरी की जा सकती है। मिट्टी जांच के आधार पर सूक्ष्म पोषक तत्वों को प्रदान करने वाले उर्वरकों को मृदा में डालें या फसल पर छिड़काव करें। भारतीय मृदाओं में प्रमुख रूप से जिंक, आयरन, बोरोन व मैगनीज की कमी पाई जाती है। यह अनुमान लगाया गया है कि वर्ष 2020 तक खाद्यान्नों का लक्षित उत्पादन 320 करोड़ टन प्राप्त करने के लिए 2.88 करोड़ टन पोषक तत्वों की जरूरत होगी। जबकि रासायनिक उर्वरकों द्वारा इनकी कुल उपलब्धता 2.16 करोड़ टन होगी। इस प्रकार 72 लाख टन के अंतर को पूरा करने में पौधों को पोषक तत्व प्रदान करने वाले अन्य स्रोतों जैसे जैविक खादें, जैविक उर्वरक, फसल अवशेष इत्यादि की महत्वपूर्ण भूमिका होगी। रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग जैविक खादों, जैविक उर्वरकों, फसल अवशेषों, हरी खादों, कम्पोस्ट एवं वर्मी कम्पोस्ट के साथ अच्छे परिणाम देता है। अतः भूमि की उर्वराशक्ति को बनाए रखने हेतु फसलों में रासायनिक उर्वरकों के साथ जैविक खादों एवं जैविक उर्वरकों का प्रयोग अवश्य करना चाहिए। इस तरह रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक व अनुचित प्रयोग को कम करने हेतु एकीकृत पोषण प्रबंधन की सलाह दी जाती है।

कृषि सूचना प्रौद्योगिकी – आज कृषि विश्वविद्यालयों/संस्थानों के कृषि सूचना प्रौद्योगिकी केन्द्रों के वैज्ञानिकों द्वारा उपयुक्त किस्मों के चुनाव, मौसम पूर्वानुमान पर आधारित फसल का आयोजन, फसल और फलोत्पादन प्रबंधन, नाशीजीव प्रबंधन, फसलोत्तर प्रबंधन और उत्पाद के विपणन के क्षेत्रों में प्रदान की गई परामर्शी सेवाओं से किसान लाभान्वित हुए हैं। वैज्ञानिको व विषय–वस्तु विशेषज्ञों द्वारा खेती के विभिन्न विषयों पर किसानों का मार्गदर्शन करने के लिए रेडियो/टी.वी वार्ताएं की जाती हैं। नवीनतम सूचना प्रौद्योगिकी किसानों को एक प्रभावी मंच उपलब्ध करती है, जहां वे वैज्ञानिकों, विकास एजेंसियों तथा कृषि फर्मों के साथ आपसी विचार–विमर्श कर अपनी समस्याओं को साझा कर सकेंगे और सीखने की क्षमता को बढ़ा सकेंगे। अत्याधुनिक सूचना प्रौद्योगिकियों के द्वारा खेती में उत्पादन लागत कम करने, पानी व ईंधन की बचत और संसाधन उपयोग दक्षता बढ़ाने के साथ–साथ किसानों की सामाजिक–आर्थिक दशाओं में भी सुधार हुआ है। फार्म उत्पादों की गुणवत्ता सुधारने में भी सूचना प्रौद्योगिकियां मददगार रही हैं। हाल के वर्षों में प्राकृतिक ससांधनों के डिग्रेडेशन को कम करने में नवीनतम सूचना प्रौद्योगिकी की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। अन्ततः अग्रणी सूचना प्रौद्योगिकी मृदा स्वास्थ्य में सुधार करने, उत्पादकता बढ़ाने, अधिक लाभ, पर्यावरण प्रदूषण कम करने और ससांधन उपयोग दक्षता बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका रखती है जो प्रत्यक्ष रूप से अरबों लोगों के लिए खाद्य असुरक्षा को कम कर सकती है। इसके माध्यम से न केवल किसानों की मानसिकता में क्रांतिकारी परिवर्तन आ रहे हैं बल्कि वे आर्थिक रूप से पहले से सम्पन्न हुए हैं। सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग मौसम सम्बंधी जानकारी, मृदा उर्वरता व उत्पादकता सम्बन्धी तथा भूमि सम्बन्धी रिकार्डों के कम्प्यूटरीकरण में भी किया जा रहा है। सूचना प्रौद्योगिकी किसानों, वैज्ञानिकों और सरकार के मध्य सम्पर्क सेतु का कार्य करती है। इसके माध्यम से सरकारी योजनाओं और कृषि अनुसंधान सम्बन्धी महत्वपूर्ण सूचनाएं सीधे तौर पर किसानों तक पहुंचती हैं। किसानों के कल्याण और उनकी प्रगति के लिए कृषि सूचना प्रौद्योगिकी सेवा को दुरुस्त करने की जरूरत है।

फसल अवशेष प्रबन्धन – उत्तर–पश्चिम भारत में धान–गेहूं फसल चक्र के अन्तर्गत फसल अवशेषों का प्रयोग आम बात है। कृषि में मशीनीकरण और बढ़ती उत्पादकता की वजह से फसल अवशेषों की अत्यधिक मात्रा उत्पादित होती जा रही है। फसल कटाई उपरांत दाने निकालने के बाद प्रायः किसान भाई फसल अवशेषों को जला देते हैं। पंजाब, हरियाणा और पश्चिम उत्तर प्रदेश के साथ–साथ देश के अन्य भागों में भी यह काफी प्रचलित है। फसल अवशेषों के जलाए जाने से निकलने वाले धुएं से पर्यावरण प्रदूषण तो बढ़ता ही है। साथ ही धुएं की वजह से हृदय और फेफड़े से जुड़ी बीमारियां भी बढ़ती हैं। धुएं में कार्बन–डाई–आक्साइड, कार्बन–मोनो–आक्साइड और पार्टिकुलेट जैसे हजारों हानिकारक तत्व मिले हो सकते हैं जिनमें व्यक्ति की सेहत

को बुरी तरह से नुकसान पहुंचाने की क्षमता होती है। फसल अवशेषों का प्रयोग जैविक खेती में करके मृदा में कार्बनिक कार्बन की मात्रा में सुधार किया जा सकता है। इसी प्रकार सब्जियों के फल तोड़ने के बाद इनके तने, पत्तियां और जड़ें खेत में रह जाती हैं जिनको जुताई करके मृदा में दबाने से खेत के उपजाऊपन में सुधार होता है। यद्यपि फसल अवशेष का पोषक तत्व प्रदान करने में महत्वपूर्ण योगदान है। परन्तु अधिकांशतः फसल अवशेषों को खेत में जला दिया जाता है या खेत से बाहर फेंक दिया जाता है। फसल अवशेष पौधों को पोषक तत्व प्रदान करने के साथ–साथ मृदा की भौतिक, रासायनिक और जैविक क्रियाओं पर भी अनुकूल प्रभाव डालते हैं। फसल अवशेष क्षारीय मृदाओं के पी.एच. को कम करके उन्हें खेती योग्य बनाने में भी मदद करते हैं।

अत्याधुनिक कृषि यंत्र रोटावेटर – जिस तरह फसल उत्पादन बढ़ाने के लिए नवीनतम तकनीक, उन्नतशील प्रजातियां और फसल संरक्षण आवश्यक है, ठीक उसी तरह खेती में आधुनिकतम कृषि यंत्रों का प्रयोग भी अति महत्वपूर्ण है। उन्नत कृषि यंत्रों का प्रयोग मानव श्रम को कम करने तथा कार्य की गुणवत्ता, समय एवं ऊर्जा की बचत के लिए होता है। आज खेती के अधिकांश काम मशीनों से किए जाते हैं। फसलों की बुवाई के लिए दो–तीन बार हल से जुताई, फिर डिस्क हैरो द्वारा जुताई तथा अंत में खेत को समतल करने के लिए पटेला चलाया जाता है। इन सबके स्थान पर खेत तैयार करने के लिए रोटावेटर का प्रयोग किया जा सकता है। यह एक अति उन्नत किस्म का जुताई यंत्र है। यह एक बार डिस्क–हैरो तथा दो बार कल्टीवेटर के बराबर की जुताई एक ही बार में करता है। इसके द्वारा धान की रोपाई हेतु पडलिंग भी की जा सकती है। इस मशीन से 50 से 60 प्रतिशत समय और 40 से 60 प्रतिशत ऊर्जा की बचत होती है। मिट्टी के बड़े–बड़े ठेलों को काटकर एक ही बार में भुरभुरा तथा बुवाई हेतु उपयुक्त बना देती है। यह मशीन खरपतवारों को भी जड़ से उखाड़ने का काम करती है। यह फसल के डंठलों व अवशेषों को खाद में परिवर्तित करने में मदद करती है। एक हेक्टेयर खेत की जुताई हेतु लगभग 3.6 घंटे का समय लगता है एवं खेत तैयार करने की लागत लगभग 800 रुपये प्रति हेक्टेयर आती है। इसकी अनुमानित कीमत 74,000 से 160,000 रुपये है।

फर्टिगेशन – यह शब्द 'उर्वरक' और 'सिंचाई' दो शब्दों से मिलकर बना है। ड्रिप सिंचाई प्रणाली में जल के साथ–साथ उर्वरकों को भी पौधों तक पहुंचाना 'फर्टिगेशन' कहलाता है। फर्टिगेशन द्वारा उर्वरकों को कम मात्रा में और कम अंतराल पर पूर्वनियोजित सिंचाई के साथ दे सकते हैं। इससे उर्वरक उपयोग दक्षता बढ़ने के साथ–साथ पौधों को आवश्यकतानुसार पोषक तत्व मिल जाते हैं। साथ ही महंगे उर्वरकों का अपव्यय भी कम होता है। इस विधि से जल और उर्वरक पौधों के मध्य न पहुंचकर सीधे पौधों की जड़ों तक पहुंचते हैं। इसलिए फसल में खरपतवार भी कम पनपते हैं।

एकीकृत कृषि प्रणाली – खेती में लगातार एक ही प्रकार की फसलें उगाने व एक ही तरह के आदानों का प्रयोग करने से न केवल फसलों की पैदावार में कमी आई बल्कि उनकी गुणवत्ता में भी गिरावट दर्ज की गई। एक फसल प्रणाली न तो आर्थिक दृष्टि से लाभदायक है, और न ही पारिस्थितिकी दृष्टि से अधिक उपयोगी है। अतः फार्म पर धान्य फसलों के साथ दलहन फसलें, बागवानी फसलें, पशुपालन, मछली पालन व मधुमक्खी पालन को भी अपनाना चाहिए जिससे यदि किसी वर्ष मुख्य फसल नष्ट हो जाए तो अन्य कृषि व्यवसाय किसानों की आमदनी का स्रोत बन जाते हैं। साथ ही एकीकृत कृषि प्रणाली में प्राकृतिक संसाधनों का भी उचित उपयोग होता है। इसके अलावा किसान मांग और आपूर्ति में होने वाले परिवर्तनों के परिणामस्वरूप मूल्यों में उतार–चढ़ाव से कम प्रभावित होते हैं। एकीकृत कृषि प्रणाली से खेत में जैविक समृद्धि भी लायी जा सकती है। इस प्रकार एकीकृत कृषि प्रणाली को अपनाकर खेती को टिकाऊ बनाया जा सकता है। एकीकृत कृषि प्रणाली का मुख्य लक्ष्य ग्रामीण पर्यावरण एवं मृदा स्वास्थ्य का बचाव और उच्च कृषि बढ़वार बनाए रखने, ग्रामीण रोजगार सृजन व बेहतर आर्थिक लाभ पाने हेतु कृषि – बागवानी – मत्स्यिकी – वानिकी – पशुधन प्रणाली के पक्ष में अनुकूल स्थितियां पैदा करना है। एकीकृत कृषि प्रणाली व विविधिकृत फसल चक्र कीट तथा व्याधियों के प्रकोप को कम करते हैं। दलहन, तिलहन और चारे की अधिकांश फसलें एवं उनकी प्रजातियां कम अवधि की हैं। साथ ही ये फसलें प्रकाश की अवधि के प्रति असंवेदनशील हैं। ये कम अवधि वाली फसलें फसल प्रणालियों की फसल सघनता व लाभ बढ़ाने में सहायक हैं। अतः एकीकृत कृषि प्रणाली की तकनीकी और कार्यप्रणाली को किसानों तक पहुंचाकर देश में खाद्यान्न उत्पादन और संसाधनों की मात्रा व उनकी गुणवत्ता को बढ़ाया जा सकता है। लघु व सीमांत किसानों के लिए बरानी क्षेत्रों में जोखिम कम कर अधिक आय लेने के लिए एकीकृत कृषि प्रणाली एक आवश्यक कदम और समय की भी मांग है। साथ ही, नवीनतम व विकसित तकनीक को किसानों तक पहुंचाने के लिए जोर देने की जरूरत है। जिससे किसान नई तकनीकी को अपनाकर अधिक लाभ कमा सकें और अपना जीवन खुशहाल बना सकें। साथ ही देश तरक्की कर सके।

(लेखक जल प्रौद्योगिकी केन्द्र, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली में कार्यरत हैं।)
ई–मेलः v.kumarnovod@yahoo.com

जमाना जैविक खेती का

—गजेंद्र सिंह मधुसूदन

पोषणीय पोषकों से भरपूर जैविक खेती का खुमार पश्चिमी देशों में इतना अधिक हो चला है कि किसानों से ज्यादा उपभोक्ताओं में इसकी उपज का अधिक क्रेज है। वे अधिक कीमत देकर भी इन्हें उपभोग करना पसंद करते हैं और भारत जैविक खेती को बढ़ावा देकर इसका भरपूर फायदा उठा सकता है। जैविक खाद निर्माताओं की दृष्टि से भी भारत उम्दा देश बन रहा है। देश में करीब 5.5 लाख जैविक खाद निर्माता हैं जो दुनिया के जैविक खाद निर्माताओं का एक तिहाई हैं लेकिन 99 प्रतिशत उत्पादक असंगठित लघु क्षेत्र के हैं जिन्हें यदि प्रमाणीकरण और विपणन सुविधाएं सुलभ करा दी जाएं तो यह लाभदायक उपक्रम में तब्दील हो सकता है।

वैसे तो जैविक खेती हमारी सांस्कृतिक विरासत और कृषि पद्वति में परंपरागत रूप से समाहित रही है लेकिन देश में हरित–क्रांति के दौरान प्रयुक्त अतिशय रासायनिक पोषकों के दुष्परिणामों और कृषिजनित पर्यावरणीय प्रदूषण की समस्याओं ने हमारे किसानों को फिर से जैविक खेती की ओर अग्रसर किया है। किसानों के इस प्रयास की समग्रता को बढ़ाने के लिए भारत सरकार ने वर्ष 2001 में जैविक उत्पादों के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम शुरू किया जिसके तहत जैव उत्पाद प्रमाण एजेंसियों हेतु मान्यता कार्यक्रम, जैव उत्पादों के मानक एवं मानकीकरण, जैविक खेती का प्रसार जैसे क्रियाकलाप शामिल हैं और इसका अनुसरण करते हुए कई राज्यों यथा उत्तराखण्ड, कर्नाटक, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान, तमिलनाडु, केरल, नगालैंड, मिजोरम, सिक्किम ने भी जैविक खेती को बढ़ावा देने की अनुकरणीय पहलें की हैं।

जैविक खेती के सन्दर्भ में भारत सरकार द्वारा वर्ष 2004–05 में शुरू किए गए राष्ट्रीय बागवानी मिशन पर कार्ययोजना तैयार करते समय यह आवश्यक माना गया कि जैविक खेती वाले प्रत्येक राष्ट्रीय बागवानी मिशन के लिए क्षेत्र, उत्पादन और उत्पादकता आधारित आंकड़ों के साथ ही जिलेवार विवरण हेतु आधारभूत सर्वेक्षण की योजना तैयार होनी चाहिए। यह मिशन पिछड़े व अगड़े क्षेत्रों के बीच संपर्क सुनिश्चित करता हुआ अनेक क्रियाकलाप संपादित करे और इसमें केवल वही क्रियाकलाप शामिल किए जाएं जिनका उत्पादकता और उत्पादन बढ़ाने में सकरात्मक प्रभाव पड़े।

राष्ट्रीय कृषि को जैविक प्रबंधन की ओर अग्रसर करने के लिए दूसरी हरित क्रांति की रूपरेखा कृषि प्रणालियों के कार्बनिक प्रबंधन पर केंद्रित है जो जैविक संसाधनों के समृद्ध पूर्वोत्तर भारत में वर्ष 2010–11 में 400 करोड़ रुपये के बजट प्रावधान के साथ सात राज्यों–असम, पश्चिम बंगाल, ओडीशा, बिहार, झारखंड, पूर्वी उत्तर प्रदेश और छत्तीसगढ़ में शुरू की गई है और इसे 'ब्रिंगिंग ग्रीन रिवोल्यूशन इन इस्टर्न इंडिया (बीजीआरईआई)'

कार्यक्रम नाम दिया गया है। इससे देश के सिंचित और असिंचित कृषि क्षेत्रों में ज्यादा उपज वाले संकर और बौने बीजों के इस्तेमाल, गहन कृषि जिला कार्यक्रम, लघु सिंचाई, कृषि शिक्षा, पौध संरक्षण, फसल चक्र, भू–संरक्षण और ऋण आदि के लिए किसानों को बैंकों की सुविधाएं मुहैया करा तेजी से कृषि उत्पादन में बढ़ोतरी करना है और इसके ठोस नतीजे भी आने शुरू हो गए हैं। पूर्वी भारत में धान की फसल प्रणालियों की उत्पादकता को सीमित करने वाले अवरोधों को दूर करने में यह कार्यक्रम बहुत लाभप्रद सिद्ध हो रहा है। इसके बाद से इस क्षेत्र के किसान कम लागत से अच्छी आमदनी अर्जित कर रहे हैं। धान और गेहूं की पैदावार में उल्लेखनीय नतीजे सामने आए हैं। इसके तहत बिहार और झारखंड में धान की पैदावार में भारी वृद्धि हुई है। इससे उत्साहित होकर सरकार ने केन्द्रीय बजट 2012–13 में 1000 करोड़ रुपये का प्रावधान इस कार्यक्रम हेतु किया और इसे 12वीं पंचवर्षीय योजना के दृष्टिकोण–पत्र में राष्ट्रीय प्राथमिकता के रूप में चिन्हित किया गया है।

देश का पूर्वोत्तर क्षेत्र जैविक खेती की सर्वाधिक संभावनाओं से युक्त है इसलिए सरकार ने पूर्वोत्तर क्षेत्र में वाणिज्यिक खेती को बढ़ावा देने के लिए भी वर्ष 2014–15 में बजट राशि घोषित की थी। अब सरकार जैविक खेती को देश भर में संपूर्णता और सघनता से आंदोलित करने के लिए राष्ट्रीय सतत खेती मिशन, राष्ट्रीय कृषि विकास योजना, एकीकृत बागवानी विकास मिशन, राष्ट्रीय तिलहन एवं ऑयल पॉम पर मिशन, आईसीएआर की जैविक खेती पर नेटवर्क परियोजना के तहत विभिन्न योजनाओं/कार्यक्रमों के जरिए जैविक खेती को बढ़ावा दे रही है। इस हेतु केंद्रीय नेतृत्व की जिम्मेदारी 'कृषि व्यवस्था अनुसंधान के लिए परियोजना निदेशालय' मोदीपुरम, मेरठ को दी गई है जो इसे 12 राज्यों, राज्य कृषि विश्वविद्यालयों सहित 13 सहकारिता केंद्रों के माध्यम से आगे बढ़ा रहा है। इस योजना में 14 फसलें–बासमती चावल, बरसाती गेहूं, मक्का, चना, चिपकी, सोयाबीन, मूंगफली, सरसों, इसबगोल, काली मिर्च, अदरक, टमाटर, बंदगोभी और फूलगोभी कवर की गई हैं।

इसके अलावा, जैविक खेती को बढ़ावा देने हेतु किसानों को इसके लिए प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से सरकार 1 अप्रैल, 2015 से एक क्लस्टर आधारित कार्यक्रम क्रियान्वित कर रही है, जिसका नाम परम्परागत कृषि विकास योजना (पीकेवीवाई) है, जिसके तहत जैविक खेती का काम शुरू करने के लिए 50 या अधिक ऐसे किसान एक क्लस्टर बनाएंगे, जिनके पास 50 एकड़ भूमि है। इस तरह तीन वर्षों के दौरान जैविक खेती के तहत 10000 क्लस्टर बनाए जाएंगे, जो 5 लाख एकड़ के क्षेत्र को कवर करेंगे। फसलों की पैदावार के लिए बीज खरीदने और उपज बाजार में पहुंचाने के लिए हर किसान को अगले तीन वर्षों में प्रति हेक्टेयर 50,000 रुपये देने का प्रावधान है। इस योजना के तहत वर्ष 2015–16 के लिए 300 करोड़ रुपये की धनराशि आवंटित की गई है जिसमें रासायनिक पोषकों व उर्वरकों पर निर्भरता घटाते हुए पर्यावरण हितैषी अवधारणा विकसित करने, उपज आगतों के लिए स्थानीय प्राकृतिक स्रोतों का अनुकूलतम उपयोग, जैव उत्पादों हेतु संभावित बाजार का विकास करना, ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़ाना, समूह आधारित जैविक खेती को बढ़ावा देना, जैव उत्पादों का प्रमाणीकरण, पौधपोषण व संरक्षण तकनीकों का प्रबंधन और परंपरागत स्थानीय तकनीकों को बढ़ावा देना,जैविक आगतों व निर्यात सहायता प्रदान करना एवं अधिकतम संभव जागरुकता फैलाना शामिल है।

इन सरकारी पहलों का नतीजा है कि पिछले एक दशक में जैविक खेती के फसली क्षेत्र में करीब 17 गुना की वृद्धि हुई है और यह वर्ष 2003–04 में 42 हजार हेक्टेयर से बढ़कर वर्ष 2013–14 में 7.23 लाख हेक्टेयर हो गया। इसके अलावा 3.2 लाख हेक्टेयर क्षेत्र जैविक रूपांतरण की प्रक्रिया में है जिसमें 6 लाख से अधिक किसान संलग्न हैं। इसमें वन एवं बागवानी आधारित जैविक खेती शामिल नहीं है यदि इसे भी शामिल कर लिया जाए तो देश में जैविक खेती का कुल क्षेत्र 14 करोड़ हे. हो जाता है। इस समय 22 करोड़ डालर मूल्य के 1.6 लाख टन जैविक उत्पाद निर्यात किए जा रहे हैं जा वैश्विक निर्यात के एक प्रतिशत से कम हैं। इस समय कुल जैविक फसली उत्पादन करीब 12.4 लाख टन है।

वैसे तो देश के सभी राज्य क्षेत्रों मे कुछ न कुछ हिस्सा जैविक खेती के अधीन है लेकिन 12 राज्यों में सघन प्रयासों के तहत जैविक खेती हो रही है। केन्द्र सरकार के प्रयासों के अलावा अब तक 9 राज्य कर्नाटक, केरल, आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, नागालैंड, सिक्किम, मिजोरम और उत्तराखण्ड जैविक खेती नीति का मसौदा तैयार कर चुके हैं। इनमें से सिक्किम, नगालैंड, मिजोरम और उत्तराखण्ड ने 100 प्रतिशत जैविक खेती का लक्ष्य घोषित किया है और सिक्किम व मिजोरम अगले कुछ वर्षों में पूर्णतः जैविक खेती में तब्दील हो जाएंगे। अब जैविक खेती का प्रभाव देश के सभी हिस्सों में देखा जा सकता है जैसे आन्ध्र प्रदेश के 23 जिलों के किसान रसायन मुक्त खेती कर रहे हैं।

जैविक खेती की अनुकरणीय पहलें – मध्यप्रदेश देश में जैविक खेती को आन्दोलित करने वाला पहला राज्य है जिसने वर्ष 2001–02 में प्रत्येक खण्ड से चयनित कर 313 गांवों में जैविक खेती की शुरुआत की और इन्हे 'जैविक गांव' नाम दिया गया। सरकार के सघन प्रचार–प्रसार और व्यापक प्रयासों के

(शेष पृष्ठ 28 पर)

प्रधानमंत्री का किसानों के नाम पत्र

मेरे प्यारे किसान भाइयों और बहनों,

'प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना' के समाचार आप तक पहुंच गए होंगे। हमारे देश में किसान हमेशा असुरक्षित महसूस करता है, कभी प्राकृतिक आपदा तो कभी बाजार में गिरती कीमतों की वजह से। पिछले 18 महीनों में मेरी सरकार ने इन संकटों में मदद पहुंचाने के लिए अनेक कदम उठाए हैं।

किसानों के लिए बीमा योजनाएं पहले भी थीं। लेकिन ये कई कारणों से सफल नहीं हुई–कभी प्रीमियम दर बहुत ज्यादा, कभी नुकसान की दावा राशि बहुत कम, तो कभी स्थानीय नुकसान शामिल नहीं। परिणामस्वरूप मुश्किल से 20 प्रतिशत किसान ही उनसे जुड़ते थे, और अपना हक पाने के लिए भी उनको अनेक प्रकार की परेशानियां उठानी पड़ती थीं। अंततः बीमा योजनाओं के प्रति किसानों का भरोसा कम हो गया था।

ऐसे में हमने राज्यों से, किसानों से, बीमा कंपनियों से गहन विचार–विमर्श किया और अब मेरे अपने प्यारे किसान भाई–बहनों के चरणों में किसानों को व्यापक लाभ पहुंचाने वाली 'प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना' सादर समर्पित कर रहा हूं। इस प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना की विशेषताएं ये हैं–

- फसल बीमा में यह सरकार की अब तक ही सबसे बड़ी मदद है
- फलस्वरूप किसानों के लिए यह अब तक की सबसे कम प्रीमियम दर होगी
- शेष भार सरकार द्वारा वहन किया जाएगा–90 प्रतिशत से ज्यादा होने पर भी
- खाद्यान्न, दलहन, तिलहन फसलों के लिए एक मौसम, एक दर होगी–जिलेवार और फसलवार अलग–अलग दर से अब मुक्ति मिलेगी–खरीफ सिर्फ 2 प्रतिशत, रबी, सिर्फ 1.5 प्रतिशत
- **पूरा संरक्षण मिलेगा –** बीमा पर कोई कैपिंग नही होगी और इसके कारण दावा राशि में कमी या कटौती भी नहीं होगी
- पहली बार जलभराव को स्थानीय जोखिम में शामिल किया गया है।
- पहली बार देश भर में फसल कटाई के बाद चक्रवात एवं बेमौसम बारिश का जोखिम भी शामिल किया गया है
- पहली बार सही आकलन और शीघ्र भुगतान के लिए मोबाइल और सेटेलाइट टेक्नोलॉजी के व्यापक उपयोग पर जोर दिया गया है

आने वाली खरीफ फसल से यह योजना लागू हो जाएगी। इस योजना से जुड़ना सरल है और सुरक्षा अधिकतम है। मैं आपसे शामिल होने का आह्वान करता हूं।

प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी 18 फरवरी, 2016 को मध्यप्रदेश के सीहोर शहर में किसान कल्याण मेले में प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के संचालनगत दिशा–निर्देशों को जारी करते हुए।

महात्मा गांधी नरेगा - एक दशक की यात्रा

2 फरवरी, 2016 को महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी कानून (एमजीएनआरईजीए) को लागू हुए दस वर्ष पूरे हो गए। इस कानून की एक दशक की उपलब्धि राष्ट्रीय गौरव और उत्सव का विषय है। इस कार्यक्रम की शुरुआत से अब तक इस पर 3,13,844.55 करोड़ रुपये खर्च हुए हैं। इसमें से 71 प्रतिशत राशि श्रमिकों को पारिश्रमिक देने में खर्च हुई है।

श्रमिकों में से अनुसूचित जाति के श्रमिकों की संख्या 20 प्रतिशत बढ़ी है जबकि अनुसूचित जनजाति के श्रमिकों की संख्या में 17 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है। इस तरह 1980.01 करोड़ रुपये के मानव दिवस सृजित किए गए। इसमें से महिला श्रमिकों की संख्या में लगातार बढ़ोतरी हुई है। यह संवैधानिक न्यूनतम संख्या से 33 प्रतिशत अधिक है। इस दौरान टिकाऊ परिसंपत्ति का निर्माण हुआ। इन्हें प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और समग्र ग्रामीण विकास से जोड़ा गया। इस कार्यक्रम के तहत 65 प्रतिशत से ज्यादा काम कृषि और इसकी सहायक गतिविधियों में हुआ है।

कार्यक्रम में नए सिरे से फूंकी गई जान

पिछले साल यानी 2015–16 के दौरान कार्यक्रम में नए सिरे से जान फूंकी गई। इस दौरान दूसरी तिमाही (45.88 करोड़) और तीसरी तिमाही (46.10) में सबसे अधिक मानव दिवस सृजित हुए। यह पिछले पांच साल के दौरान सृजित मानव दिवस से अधिक हैं।

इस कार्यक्रम के तहत 44 प्रतिशत पारिश्रमिक का भुगतान समय पर किया गया। 64 प्रतिशत से ज्यादा राशि कृषि और इससे जुड़ी सहायक गतिविधियों में खर्च की गई। यह तीन साल में सबसे अधिक है। 57 प्रतिशत श्रमिक महिलाएं हैं, जो अनिवार्य 33 प्रतिशत की सीमा से कहीं अधिक हैं। यह भी तीन साल में सबसे अधिक है। सभी मानव दिवसों में से 23 प्रतिशत हिस्सेदारी अनुसूचित जाति वर्ग के श्रमिकों की है और जबकि अनुसूचित जनजाति वर्ग के श्रमिकों की हिस्सेदारी 18 प्रतिशत है।

ग्रामीण विकास मंत्रालय की ओर से शुरू किए गए कई सुधार कार्यक्रमों की वजह से इस कार्यक्रम में नई रफ्तार आई है। इनमें से सबसे महत्वपूर्ण राज्यों को समय पर कोष जारी करना रहा है। इस योजना को लागू करने वाली एजेंसियों और लाभार्थियों को समय और पारदर्शी ढंग से कोष जारी करने के लिए इलेक्ट्रॉनिक फंड मैनेजमेंट सिस्टम शुरू किया गया।

इसके लिए बैंकों और डाकघरों के बीच बेहतर समन्वय की व्यवस्था की गई और भुगतान के लंबित होने के मामलों पर नजर रखी गई। साथ ही पारिश्रमिक भुगतान में लगने वाली अवधि भी घटाई गई। मंत्रालय ने नौ सूखाग्रस्त राज्यों में संकट पर तुरंत कदम उठाए और वहां के संकटग्रस्त इलाकों में 50 दिनों का अतिरिक्त रोजगार दिया गया।

आगे की राह

आने वाले वर्षों में मनरेगा की प्रक्रिया को सरल और मजबूत करने पर ध्यान दिया जाएगा। इस संबंध में एक–एक मास्टर सर्कुलर जारी किया गया। इसमें इस कानून को लागू करने के संबंध में केंद्र सरकार के सभी प्रमुख निर्देशों को मिला दिया जाएगा। राज्यों को इसमें लचीलापन लाने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा। इस संबंध में समवर्ती ऑडिट और निगरानी की जाएगी। मंत्रालय श्रमिकों को कुशल भी बनाएगा। प्रोजेक्ट लाइफ के जरिए ऐसे 10000 तकनीशियनों को प्रशिक्षित किया जाएगा। उन्हें स्वरोजगार और जीविका के लिए पारिश्रमिक कमाने के लिए प्रशिक्षित किया जाएगा।

(पसूका से साभार)

(पृष्ठ 25 का शेष)
चलते प्रदेश में जैविक खेती आन्दोलन का रूप ले चुकी है और आज यह जैविक खेती के मामले में देश का पहला राज्य बन गया है जहां 2.32 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में जैविक खेती हो रही है, जो इसके सकल फसली क्षेत्र 225.5 लाख हे. का 1.06 प्रतिशत है। यह जैविक खेती की सर्वाधिक सम्भावना वाला राज्य है।

नवनिर्मित राज्यों में से एक छत्तीसगढ़ भी जैविक खेती के मामले में काफी आगे निकल चुका है। यहां के बस्तर और सरगुजा संभागों के किसान तेजी से जैविक खेती अपना रहे हैं। राज्य में औषधीय और संगठित पौधों की अनूठी संपदा है जिसे जैविक खेती के माध्यम से संवर्धित किया जा सकता है। इस समय प्रदेश में करीब 4300 हेक्टेयर में जैविक खेती की जा रही है जो इसके सकल फसली क्षेत्र 57 लाख हे. का 0.08 प्रतिशत है और सघन सरकारी प्रयासों व जागरुकता अभियानों के चलते 13 हजार हेक्टेयर में जैविक खेती को अपनाने की तैयारी है। यह जैविक खेती की सर्वाधिक सम्भावना वाले राज्यों में शुमार है।

हिमालय की गोद में अवस्थित उत्तराखंड में कृषि की मौलिक प्रकृति ही जैविक है लेकिन इसकी जैविकता और विविधता संरक्षित करने के उद्देश्य से सरकारी प्रयासों के तहत यहां जैविक खेती की शुरुआत वर्ष 2003 में हुई थी और वर्तमान में करीब 25 हजार हे. में जैविक तरीके से खेती की जा रही है जो इसके सकल फसली क्षेत्र 11.32 लाख हे. का 2.21 प्रतिशत है। इसमें करीब 80 प्रतिशत पर्वतीय और शेष मैदानी क्षेत्र है यहां बहुत–सी फसलें परंपरागत जैविक तरीके से उत्पादित और संरक्षित की जा रही हैं, इसके लिए राज्य में कई संगठन भी सक्रिय हैं जैसे 'बीज बचाओ आंदोलन' लघु अनाज मंडुआ की 12 और झंगोरा की 8 उत्कृष्ट प्रजातियों के संरक्षण में किसानों को मदद कर रहा है मंडुआ–झंगोरा उत्तराखंड की समृद्ध जैव विविधता व उसकी बहुफसली बारानाजा कृषि पद्धति का हिस्सा है।

सिक्किम देश का पहला राज्य है, जहां राजकीय विधान के तहत जैविक खेती को बढ़ावा दिया जा रहा है और इसके लिए सिक्किम विधानसभा ने वर्ष 2003 में एक प्रस्ताव पारित कर राज्य के सम्पूर्ण कृषि क्षेत्र एवं पद्धति को जैविक तरीके में परिवर्तित करने हेतु सिक्किम स्टेट आर्गेनिक बोर्ड का गठन किया। इसी विधान के तहत रासायनिक पोषकों, उर्वरकों और कीटनाशकों की बिक्री को पूर्णतः प्रतिबन्धित करते हुए इन पर देय सब्सिडी को पूर्णतः खत्म कर दिया गया और वर्ष 2006 में सिक्किम सरकार ने केन्द्र सरकार के रासायनिक खाद कोटे को उठाना बन्द करते हुए राज्य के सभी सरकारी एवं निजी बिक्री केन्द्रों को बन्द कर दिया। इसके विकल्प के तौर पर कार्बनिक कृषि के प्रोत्साहन हेतु वर्ष 2009 तक 24536 कम्पोस्ट की तथा 14487 बर्मी कम्पोस्ट इकाइयां स्थापित कर राज्य के करीब 400 गांवों को जैविक गांव कार्यक्रम के अधीन लाया गया जिसके तहत 3 करोड़ रुपये की लागत से 4 जिलों के 14 हजार किसानों की 14 हजार एकड़ भूमि को कवर किया गया। राज्य के 62 हजार कृषक परिवारों को वर्ष 2015 तक पूर्णतः जैविक खेती के लिए तैयार करने एवं उनकी बहुआयामी सहायता के लिए राज्य के सरकारी कृषि फार्मों नाजीटाम और भेलीड़ारा को उत्कृष्ट जैविक शोध केन्द्र के रूप में परिवर्तित कर दिया गया है। इसके अलावा राज्य सरकार जैविक उत्पादों की प्रोसेसिंग,भंडारण, मार्केटिंग एवं आकर्षक मूल्यों हेतु मंडियों एवं बिक्री केन्द्रों की भी स्थापना कर रही है। तथा जैविक खेती के विभिन्न कार्यक्रमों को समग्रता से प्रोत्साहित करने हेतु वर्ष 2010 में सिक्किम आर्गेनिक मिशन संचालित किया गया जिसके तहत राज्य की 50 हजार हेक्टेयर कृषि भूमि को जैविक खेती में परिवर्तित करने का त्रिवार्षिक लक्ष्य निर्धारित किया गया जिसके अन्तर्गत वर्ष 2013 में 18 हजार हेक्टेयर, वर्ष 2014 में 18 हजार हेक्टेयर और वर्ष 2015 में 14 हजार हेक्टेयर भूमि को जैविक खेती में परिवर्तित करने का लक्ष्य है। राज्य में जैविक खाद की कुल मांग 10 लाख मीट्रिक टन है जिसे कंपोस्ट इकाइयों से प्राप्त किया जा सकता है। सिक्किम सरकार वर्मी कंपोस्ट पर 15 हजार रुपये और ग्रामीण कंपोस्ट पर 20 हजार रुपये प्रति इकाई की दर से सब्सिडी प्रदान कर रही है।

प्रतिकूल परिस्थितियों के बावजूद राजस्थान में 67 हजार हे. क्षेत्र में जैविक खेती की जा रही है जो इसके सकल फसली क्षेत्र 246 लाख हे. का 0.27 प्रतिशत है। यहां अनेक फसलें जैविक तरीके से उगाई जा रही हैं, बांसवाडा, झालावाड़, अलवर, श्रीगंगानगर सहित आसपास के क्षेत्र में जैविक खेती के सघन प्रयास किए जा रहे हैं और इसके लिए किसानों को पुरस्कृत भी किया जा रहा है। राजस्थान के शेखावाटी स्थित मोरारका फाउंडेशन ने जैविक खेती की दिशा में भूमि, जल, उर्वरा, उत्पाद, बाजार और प्रसार इत्यादि पर क्रांतिकारी काम किया है। यह किसानों को जैविक खेती की जानकारी, प्रशिक्षण,सहायता और विक्रय बाजार सुलभ करा रहा है, इसके प्रयासों से आज पूरा शेखावाटी क्षेत्र रेगिस्तान में नखलिस्तान की तरह हो गया है। क्षेत्र के किसान बताते हैं कि जैविक खेती से उनकी खेती की लागत में 80 प्रतिशत की कमी और कृषि उत्पादों की गुणवत्ता में सुधार सहित उनकी आय में 40 प्रतिशत तक वृद्धि हुई है। यह फाउंडेशन वर्मीकल्चर का बहुधा प्रयोग करते हुए करीब एक लाख एकड़ भूमि में जैविक खेती का विकास कर चुका है। राजस्थान सरकार ने वर्ष 1995 में इस फाउंडेशन के सहयोग से राज्य के 10 हजार किसानों को जैविक खेती की शुरुआत के लिए प्रेरित किया था और आज दो लाख से अधिक किसान जैविक तरीके

से खाद्यान्न, फल, सब्जी, दलहन, तिलहन और मसालों का उत्पादन कर दिल्ली और मुंबई के बाजारों में सीधे पहुंचा रहे हैं,आज शेखावाटी क्षेत्र के जैविक उत्पाद ब्रांड का रूप ले चुके हैं और पिछले डेढ़ दशकों से शेखावाटी उत्सव जैविक भोज के रूप में प्रसिद्ध हो चुका है। इस फाउंडेशन ने किसानों को बिचौलियों के चंगुल से बचाने और उत्पादों का उचित मूल्य दिलाने के लिए कई एग्री बिजनेस केंद्र खोलने के अलावा मुंबई में जैविक उत्पादों का देश का पहला और सबसे बड़ा रिटेल स्टोर 'डाउन टू अर्थ' शुरू किया है जिसमें 200 से अधिक जैव उत्पाद हमेशा उपलब्ध रहते हैं। ये गुणवत्ता और शुद्धता के लिए देश–विदेश में प्रसिद्ध हैं। यह देश में जैविक उत्पादों के मौजूदा 3 करोड़ उपभोक्ताओं को लक्षित करते हुए ऐसे स्टोर देश के कई हिस्सों में शुरू करने की योजना बना रहा है। केंचुआ से खाद बनाने की विधि वर्मी कंपोस्ट शेखावाटी की ही देन है जो आज समूचे राजस्थान सहित कर्नाटक, तमिलनाडु, गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, बिहार, प.बंगाल, उत्तर प्रदेश और हिमाचल प्रदेश में बड़े पैमाने पर प्रचलित है तथा विकसित केंचुओं को दुनिया के कई देशों में निर्यात कर रहे हैं।

पोषकता की दृष्टि से जैविक उत्पाद अनेक गुणकारी औषधियों से युक्त तथा बीमारीजनित दुष्प्रभावों से मुक्त होते हैं। अतः ये पौष्टिक और स्वादिष्ट तो हैं ही,हमारे स्वास्थ्य की दृष्टि से भी लाभदायक हैं। विषैलेपन से मुक्त इन उत्पादों के प्रयोग से अनेक बीमारियां और पोषणीय कमजोरियां स्वतः समाप्त हो जाती हैं। हाल के कई शोध बताते हैं कि जैविक खेती रासायनिक तरीकों की तुलना में अधिक उत्पादन देती है तथा वर्षा–आधारित क्षेत्रों में यह अधिक लाभदायक सिद्ध हुई हैं। देश के अनेक कृषि उत्पाद जहां रसायनों की अधिकता की वजह से विदेशों में प्रतिबंधों का सामना कर रहे हैं वहीं वैश्विक बाजार में प्रतियोगिता और गुणवत्ता की दृष्टि से जैविक उत्पाद खरे उतर रहे हैं। भंडारण की दृष्टि से जैविक उत्पाद टिकाऊ होने की वजह से संरक्षण के विशेष उपायों की मांग नहीं करते और ताप,आर्द्रता व संवेदनशीलता के प्रति सहिष्णु होते हैं। इससे किसानों को भंडारण की महंगी लागतों से मुक्ति मिलती है एवं हर साल देश में 60 हजार करोड़ रुपये के बरबाद हो रहे खाद्यान्नों को भी जैविक तरीकों से संरक्षित किया जा सकता है। जैविक खेती कृषक हितों की दृष्टि से रासायनिक उत्पादों पर निर्भरता कम करके खेती की लागतों को घटाती है, फसलों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता में वृद्धि, सिंचाई अंतराल और मृदा की उपजाऊ क्षमता में वृद्धि करती है, मृदा की दृष्टि से उसकी गुणवत्ता एवं जलधारण क्षमता को बढ़ाती है, मृदा से पानी का वाष्पीकरण घटाकर उसकी नमी को बढ़ाती है, पर्यावरण की दृष्टि से यह न केवल मृदा प्रदूषण को घटाती है अपितु अपरदनजनित कारकों को नियंत्रित कर भूमि के जलस्तर को भी बढ़ाती है, यह पारितंत्र की प्राथमिक उत्पादकता और खाद्य श्रृंखला की पोषकता को बढ़ाकर जैव विविधता को भी संरक्षित करती है। यह उत्पादों की गुणवत्ता में देशीपन को पोषित करती है और उनको क्षेत्रीय पहचान भी प्रदान करती है। भभूत अमृतपानी, अमृत संजीवनी, मटका खाद जैसी अभिनव जैविक खाद तकनीकें तथा गौमूत्र, नीम–पत्ती का घोल/निबोली/खली,मट्ठा, मिर्च, लहसुन, लकड़ी की राख, करंज खली जैसे जैविक व्याधि नियंत्रक अनुभव कृषकों की लागतें घटाने और फसली उत्पादकता बढ़ाने में बहुत सहायक सिद्ध हुए हैं।

जैविक खेती प्रकृति का स्वाभाविक वरदान है। इनको कम कीमत पर आसानी से खेत पर तैयार किया जा सकता है जैसे कंपोस्ट, गोबर की खाद, हरी खाद, जैव अपशिष्ट, बायोगैस से तैयार कंपोस्ट, मुर्गी एवं पक्षियों का बीट, हड्डी चूर्ण,कीचड़, शीरा एवं गन्ने का अपशिष्ट, वर्मी कंपोस्ट, नेडेप कंपोस्ट,अरंडी, महुआ, नीम, मूंगफली, अलसी, सरसों, बिनौला की खली, सनई, ढैंचा एवं दलहनों के फसली अवशेष आदि खेतों के जैविक पोषण के प्रमुख स्रोत हैं। जीवांश खादें सस्ती होती हैं और इनकी अधिक मात्रा खेत में डालनी पड़ती है लेकिन उर्वरकों की तुलना में इनका प्रभाव दो–तीन वर्ष तक मृदा में कायम रहता है। इनके प्रयोग से भूमि की भौतिक, रासायनिक और जैविक दशा में सुधार होता है

आज देश में उद्योग और व्यापार में सफल अग्रणी व्यवसायी और किसान जैविक खेती को अधिक प्राथमिकता दे रहे हैं लेकिन देश का आदिवासी कृषक वर्ग भी इसमें बड़े पैमाने पर संलग्न है। वैसे तो जैविक खेती देश के आदिवासियों की परंपरा और जीविका का आधार है फिर भी यदि इन्हें जैविक खेती के व्यावसायिक लाभों तथा वन अधिकार अधिनियम 2006 के तहत वन के मालिकाना हकों से जोड़ दिया जाए तो यह इनके बीच आंदोलन का रूप ले सकती है क्योंकि इस कानून के तहत पिछले 10 वर्षों में करीब 17 लाख वनवासी परिवारों को वनक्षेत्रों में अपनी जमीन पर अधिकार प्राप्त हुआ है जहां उनकी आजीविका निर्भर है। इन परिवारों में से करीब 5.5 लाख ओडिशा और करीब 4.5 लाख त्रिपुरा के हैं। देश में आदिवासियों की आबादी करीब 10.42 करोड़ है जो हमारी आबादी का 8.6 प्रतिशत है। पूर्वोत्तर भारत जो आदिवासियों का गढ़ है,के अलावा छत्तीसगढ, झारखंड,ओडिशा और मध्य प्रदेश में इनकी कुल आबादी 20 प्रतिशत से अधिक है। यदि इन्हें सरकारी और गैर–सरकारी तौर पर प्रेरित किया जाए तो देश न केवल जैविक उत्पादों का हब बनेगा बल्कि इनके निर्यात और विदेशी बाजार में गहरी पैठ भी बना सकता है।

वैसे 2–3 बीघा भूमि वाले देश के करीब 4 करोड़ सीमांत किसानों के लिए यह अधिक लाभकारी है जो औषधियों, फूलों और सब्जियों की साल में 3–4 फसलें बहुफसली खेती से उत्पादित कर सकते हैं। आंकड़े बताते हैं कि अनेक कारणों से मांसाहारी भोजन के प्रति अनासक्ति और शाकाहारी प्रति आसक्ति बढ़ रही है, इस दृष्टि से भी जैविक खेती सम्भावनाओं से युक्त है।

यद्यपि पिछले 20 वर्षों में देश में जैविक खेती के क्षेत्र और उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है फिर भी इसे पर्याप्त नहीं कहा जा सकता है। इस समय देश के सकल फसली क्षेत्र 20 करोड़ हे. में से केवल 8 लाख हे. क्षेत्र जैविक खेती के अधीन है जो सकल फसली क्षेत्र का केवल 0.6 प्रतिशत है। इसे बढ़ाने की अपार संभावनाएं हैं और समय की मांग भी है क्योंकि कृषि की धारणीयता घटने से फसलों की उत्पादकता भी घट रही है या फिर बढ़ती लागतों के अनुपात में ही उत्पादन प्राप्त हो रहा है जबकि खाद्यान्न की मांग अनवरत बढ़ रही है।

मृदा में वायुसंचार बढ़ाता है और ताप नियंत्रित रहता है, जीवांश सड़ने पर कार्बनिक अम्ल छोड़ते हैं जो अन्य तत्वों की घुलनशीलता बढ़ाते हैं और पोषक जीवाणुओं की वृद्धि में मदद करते हैं। इनसे कार्बन नाइट्रोजन अनुपात तो संतुलित रहता ही है, ऊपर से भूमि की जलधारण क्षमता में भी वृद्धि होती है। इनके अधिक प्रयोग का फसलों पर न तो कोई नकारात्मक प्रभाव पड़ता है और न इनके भंडारण में कोई खास सावधानी की जरूरत पड़ती है। स्थानीय संसाधनों पर आधारित जीवांश खादों के प्रयोग से फसली कीट हमलों और बीमारीजनित हानियों का प्रभाव भी कम होता है। अतः इनसे खेतों की अनवरत घटती उत्पादन क्षमता को रोका जा सकता है ।

राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय दोनों बाजारों में अधिक लाभकारी कीमतें और उनकी आपूर्ति में कमी होना भारत के लिए एक अवसर के जैसा है। देश में जैविक कपास की अच्छी संभावना मौजूद है। वर्तमान में भारत, विश्व में कपास का सबसे बड़ा जैविक उत्पादक देश है जो दुनिया की जैविक कपास का 50 प्रतिशत उत्पादित करता है। इसके बाद चावल, दाल, तिलहन और मसालों की खेती होती है जिनके विस्तार की बेशुमार संभावनाएं हैं।

भारत जैविक खेती की संभावना वाला देश है। मानसूनी प्रकृति के बावजूद इसके विभिन्न भागों में पर्याप्त जलवायुविक विविधता देखने को मिलती है। यहां की मृदा भी अनेक विविधताओं से युक्त है जिसे आठ प्रमुख और 27 गौण प्रकार की मिट्टियों में विभक्त किया गया है। पादप जैव विविधता की दृष्टि से भी भारत दुनिया के सर्वाधिक संपन्न देशों में से एक है।

(लेखक भारत सरकार के कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय में वरिष्ठ तकनीकी सहायक हैं।)
ई–मेलः gajendra-singh88@gov.in

बीज सब्सिडी में डीबीटी व्यवस्था ने उत्तर प्रदेश में लिखी सफलता की कहानी

—अमित मोहन प्रसाद

डीबीटी के परिणामस्वरूप दोनों सीजन के दौरान राजकोष में उल्लेखनीय बचत हुई। इसने बहुत पारदर्शक ढंग से सही लाभार्थियों को लक्षित करना मुमकिन बनाया है। छोटे और हाशिये पर मौजूद किसान कृषि विभाग के पोर्टल पर स्वयं ऑनलाइन पंजीकृत कराने के बाद अब पात्रता की भावना के साथ निर्धारित दुकानों का रुख कर रहे हैं। इस व्यवस्था से लीकेज रुकी है, कागज पर होने वाले लेन-देन रुक गए हैं, सस्ते बीजों की कालाबाजारी थम गई है और व्यवस्था में पारदर्शिता आई है।

प्रत्यक्ष लाभ अंतरण (डीबीटी), मोटे तौर पर इसका आशय लाभार्थी के बैंक खाते में सीधे तौर पर हस्तांतरित किया जाने वाला कोई भी लाभ है, ताकि उसे पूरी राशि बिना किसी कमी या कटौती के प्राप्त हो सके। डीबीटी के दो स्वरूप हो सकते हैं— छात्रवृत्तियों, पेन्शन, प्राकृतिक आपदाओं के दौरान राहत आदि जैसी कुछ विशेष प्रकार की पात्रता के लिए प्रत्यक्ष नकदी हस्तांतरण तथा कृषि संबंधी कच्चे माल या इनपुट, पेट्रोलियम उत्पादों और पीडीएस के माध्यम से मिलने वाले सस्ते अनाज आदि जैसे मामलों में प्रत्यक्ष सब्सिडी हस्तांतरण। दोनों ही प्रकार की डीबीटी का परिणाम दक्षता, सही लाभार्थियों को लक्षित करना और ज्यादातर अवसरों पर धन की बचत होता है। हालांकि बैंक खातों में सीधे तौर पर नकदी का हस्तांतरण परोक्ष रूप से सब्सिडी हस्तांतरित करने की तुलना में ज्यादा सुगम होता है, जहां लाभार्थी अपने बैंक खाते में सब्सिडी प्राप्त करने से पूर्व जिंसों (वस्तुओं या कमोडिटी) की पूरी कीमत चुकाता है।

पहल के अंतर्गत एलपीजी में डीबीटी के अनुभव ने हमें दर्शाया है कि इसके परिणामस्वरूप राजकोष की बहुत ज्यादा बचत हुई है। पहले उपभोक्ता घरेलू गैस सिलिंडरों की पूरी कीमत का भुगतान करते हैं और उसके बाद सब्सिडी उनके बैंक खातों में हस्तांतरित कर दी जाती है। कृषि संबंधी कच्चे माल या इनपुट के लिए डीबीटी ज्यादा जटिल है, क्योंकि इसके लिए लाभार्थियों की कोई निर्धारित सूची नहीं है। कृषि क्षेत्र में डीबीटी का कार्यान्वयन करने के लिए, लाभार्थी किसानों के नाम और पते से संबंधित आंकड़ों की जरूरत है तथा उनके बैंक खाते के नम्बर पहली आवश्यकता है। हालांकि कृषि संबंधी कच्चे माल या इनपुट पर डीबीटी से भी राजकोष की बहुत ज्यादा बचत हो सकती है और सेवाएं प्रदान करने में दक्षता आ सकती है।

उत्तर प्रदेश के हाल के उदाहरण ने प्रदर्शित किया है कि कृषि के क्षेत्र में भी डीबीटी प्रभावी ढंग से और अपार फायदों के साथ कार्यान्वित की जा सकती हैं। राज्य ने लगातार दो सीज़न के लिए बीजों पर सब्सिडी का प्रत्यक्ष लाभ अंतरण (डीबीटी) सफलतापूर्वक कार्यान्वित किया है। यह पहले खरीफ 2015 में सभी संकर बीजों के लिए किया गया, इसके बाद रबी 2015–16 के दौरान सभी प्रकार के बीजों (प्रमाणित और संकर) पर सब्सिडी डीबीटी के माध्यम से प्रदान की गई।

इसका प्रारम्भ खरीफ 2015 में हुआ, जब पारदर्शिता लाने के वास्ते बीज सब्सिडी के लिए प्रत्यक्ष लाभ अंतरण शुरू करने के बारे में सरकार में पहली बार मंथन हुआ। उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री ने अपने बजट भाषण में 2015–16 को ''किसान वर्ष'' घोषित किया था और इसके बाद विभाग किसानों को लाभ पहुंचाने के लिए कोई अनोखी पहल करना चाहता था।

उत्तर प्रदेश में देश के बाकी हिस्सों की भांति बीजों के लिए 'स्रोत पर' सब्सिडी देने की प्रणाली भी लागू रही है। इस प्रणाली के अंतर्गत, किसानों को निर्धारित खुदरा दुकानों से सस्ती दरों पर बीज मुहैया कराए जाते हैं। 2014 के खरीफ सीजन के दौरान धान आदि के सस्ते संकर बीजों के वितरण में बड़ी संख्या में गड़बड़ियों की शिकायतें प्राप्त हुईं। सरकार ने शिकायतों पर जांच के आदेश दिए और यह तय किया गया कि संकर बीजों का उत्पादन करने वाली कम्पनियों को जांच पूरी होने के बाद ही भुगतान किया जाएगा। तब तक खरीफ 2015 का सीजन आ पहुंचा, लेकिन जांच पूरी नहीं हुई थी और भुगतान रुका हुआ था। जब उत्तर प्रदेश बीज निगम ने आगामी सीजन के लिए संकर बीजों की खरीद संबंधी निविदा जारी की, तो संकर बीजों का उत्पादन करने वाली कम्पनियों ने पिछले साल का भुगतान न होने का हवाला देते हुए इसमें भाग लेने से इंकार कर दिया।

इससे राज्य सरकार के समक्ष असमंजस की स्थिति उत्पन्न हो गई, क्योंकि यह घोषणा करना विभाग के लिए बेहद शर्मिंदगी की बात होती कि वह किसानों को सस्ते संकर बीजों का वितरण करने में सक्षम नहीं हो सकेगा। दरअसल, इसी समस्या ने प्रत्यक्ष लाभ अंतरण की नयी व्यवस्था लागू करने का अवसर प्रस्तुत किया।

संकर बीज उत्पादित करने वाली सभी कम्पनियों की बैठक आयोजित की गई और उन्हें संकर बीजों के लिए डीबीटी व्यवस्था लागू करने की उत्तर प्रदेश सरकार की मंशा के बारे में बताया गया, जहां उन्हें अपना सारा मूल्य किसानों से अग्रिम तौर पर प्राप्त हो सकेगा और इस प्रकार भुगतान रुकने की समस्या उत्पन्न ही नहीं होगी। वे इस नई व्यवस्था में भाग लेने पर सहमत हो गए। इसके बाद, समस्त हितधारकों के साथ विस्तृत चर्चा के बाद, इस नई व्यवस्था को शुरू करने का प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया।

डीबीटी के सफल कार्यान्वयन के लिए ठोस आंकड़ों का होना आवश्यक है। राज्य सरकार द्वारा पिछले साल शुरू की गई ''किसान पारदर्शी सेवा योजना'' मददगार साबित हुई। इस योजना के अंतर्गत, राज्य के किसानों के आंकड़े उनके पहचान के प्रमाण, जोत के अधिकार के रिकॉर्ड की प्रति और बैंक पासबुक के नंबर सहित तैयार किए जा रहे थे। इसके पीछे मौलिक विचार विभिन्न विभागीय योजनाओं और कार्यक्रमों के अंतर्गत मिलने वाले समस्त लाभ का अभिलिखित रूप से वितरण करना था। हालांकि राज्य में 2 करोड़ से ज्यादा जोत हैं, इसके बावजूद अप्रैल, 2015 के प्रारंभ तक डाटाबेस में सिर्फ एक लाख से कुछ अधिक किसानों का ही रिकॉर्ड मौजूद था। संकर बीजों पर सब्सिडी के लिए डीबीटी के कार्यान्वयन का फैसला होते ही और व्यापक प्रचार की बदौलत किसानों ने बड़ी संख्या में अपना पंजीकरण करवाना शुरू कर दिया। दरअसल 5,10,867 किसानों ने सस्ती दरों पर संकर बीज खरीदने के लिए अपना पंजीकरण करवाया। रबी 2015–16 के दौरान प्रमाणित बीजों पर डीबीटी की बदौलत पंजीकरण में तेजी से वृद्धि हुई और वर्तमान में डाटाबेस में 40 लाख से ज्यादा किसानों का विवरण मौजूद है और यह संख्या दिनोंदिन बढ़ती जा रही है।

संकर बीजों का उत्पादन करने वाली कम्पनियों से सरकारी ब्लॉक बीज स्टोर पर अपनी खुदरा दुकाने लगाने को कहा गया और किसानों को अपनी पसंद के संकर बीज खरीदने की छूट दी गयी। उत्तर प्रदेश के लिए अधिसूचित किस्मों पर सब्सिडी प्राप्त करने की अनुमति थी। किसानों ने पूरी कीमत चुकता कर इन खुदरा दुकानों से संकर बीज खरीदे और कैश मीमो की प्रति, पूर्णतः भरे हुए तथा पहले से डिजाइन किए गए फॉर्म की प्रति सहित बीज स्टोर पर मौजूद सरकारी कर्मचारी के पास जमा करवा दी। किसान अपने जोत के आकार के मुताबिक बीज खरीद सकते हैं और इस मात्रा पर सब्सिडी उनके बैंक खातों में हस्तांतरित की गई, जिसका विवरण पंजीकरण के समय प्राप्त किया गया था। खरीफ 2014 के दौरान, वितरित किए गए कुल 60 हजार क्विंटल से ज्यादा संकर बीजों के

विपरीत, खरीफ 2015 के दौरान इनकी मात्रा घटकर लगभग 15 हजार क्विंटल तक रह गयी। नई व्यवस्था के अंतर्गत लगभग डेढ़ लाख किसानों ने सस्ते संकर बीज खरीदे।

राज्य ने खरीफ 2014 में, धान, मक्का, ज्वार और बाजरा के संकर बीजों की सब्सिडी पर 85 करोड़ रुपये से ज्यादा धनराशि खर्च की थी, जबकि खरीफ 2015 के दौरान, जब डीबीटी का उपयोग किया गया, तो यह आंकड़ा घटकर 25 करोड़ रुपये से भी कम रहा!

इस अवस्था पर, इसे रुझान का नाम देना अनुचित होगा। इस कमी के कई कारणों में नयी व्यवस्था का अपर्याप्त ज्ञान, कमजोर मानसून के पूर्वानुमान के मद्देनजर किसानों द्वारा महंगे संकर बीजों में दिलचस्पी न लेना आदि शामिल थे। हालांकि सब्सिडी की राशि में कमी का मुख्य कारण फर्जी लाभार्थियों का बाहर हो जाना रहा, जिसके फलस्वरूप सस्ती जिंदों को खुले बाजार में जाने से रोका जा सका। लीकेज पर रोक लगना संकर बीजों पर डीबीटी कार्यान्वयन की एक अन्य प्रमुख उपलब्धि रहा।

खरीफ के दौरान डीबीटी की सफलता से प्रोत्साहित होकर, राज्य सरकार ने रबी 2015–16 के दौरान प्रमाणित बीजों के लिए परिवर्तित व्यवस्था लागू करने का फैसला किया। कुछ हितधारक, जिनके हितों पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा था, उन्होंने इसका पुरजोर विरोध किया, इसके बावजूद राज्य सरकार ने इसे लागू करने का फैसला किया। संकर बीजों की तुलना में, प्रमाणित बीजों का इस्तेमाल किसानों द्वारा बड़ी संख्या में किया जाता है। इसलिए विभाग ने बड़े ऑपरेशन या प्रचालन के लिए स्वयं को तैयार किया। इसमें प्रौद्योगिकी बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। न सिर्फ किसान स्वयं को पोर्टल पर ऑनलाइन पंजीकृत करवाते हैं, बल्कि बिल तैयार करने, उन्हें भुगतान के लिए वित्त विभाग तक भिजवाने और अंत में किसान के बैंक खाते में सब्सिडी की राशि हस्तांतरित करने की पूरी प्रक्रिया सॉफ्टवेयर से सम्पन्न की जाती है। विकसित किए गए सॉफ्टवेयर में कई कमियां थीं, जो खरीफ के कार्यकलापों के दौरान उजागर हुईं थीं। वे सभी कमियां दूर की गईं और उन्हें बड़े पैमाने के ऑपरेशन के उपयुक्त बनाया गया। इस प्रक्रिया को और ज्यादा सुचारू बनाने के प्रयास जारी हैं, ताकि पूरी प्रक्रिया बहुत सरल और उपयोग सुलभ हो जाए।

जैसे ही रबी के दौरान प्रमाणित बीजों पर डीबीटी लागू करने के राज्य सरकार के फैसले की घोषणा हुई, किसानों ने बड़ी तादाद में अपना ऑनलाइन पंजीकरण करवाना प्रारंभ कर दिया। एक दिन में 30 से 35 हजार किसान अपना पंजीकरण करवा रहे थे। क्षमता से अधिक बोझ के कारण फील्ड पर मौजूद कार्यकर्ताओं की ओर से सर्वर के धीमा पड़ने की शिकायते मिलने लगीं। कई बार अतिरिक्त बैंडविड्थ लेते हुए स्पीड बढ़ानी पड़ी। इस योजना के कार्यान्वयन में कई वर्गों की ओर से विरोध हो रहा था, लेकिन मजबूत राजनीतिक इच्छा शक्ति और विभागीय अधिकारियों की प्रशासनिक कुशाग्रता की बदौलत, पूरा कार्य सुचारू ढंग से सम्पन्न हुआ।

रबी के वर्तमान सीजन के दौरान, गेहूं, दालों और तिलहनों के बीजों की सब्सिडी पर 127 करोड़ रुपये की राशि खर्च की गई, जबकि इसकी तुलना में रबी के पिछले सीजन के दौरान 217 करोड़ रुपये की राशि खर्च हुई थी। खरीफ (संकर बीज) और रबी (सभी तरह के बीज) के दौरान राज्य के लिए कुल बचत लगभग 150 करोड़ रुपये की रही। नयी व्यवस्था के अंतर्गत लाभान्वित होने वाले किसानों की संख्या पारदर्शक रूप से लगभग 9 लाख बढ़ी है, जिनमें से अधिकांश को अपने जीवन में पहली बार व्यवस्था से सस्ते बीज प्राप्त हुए।

महत्वपूर्ण बात यह है कि पूरी प्रक्रिया बेहद पारदर्शी रही। विभाग को बीजों पर सब्सिडी का लाभ प्राप्त करने वाले सभी किसानों के नाम और पते की सही जानकारी है। शुरुआती वर्षों के दौरान, बड़ी संख्या में लाभार्थियों ने दावे किए थे, लेकिन उनकी सच्चाई हमेशा संदेहास्पद रही, क्योंकि लाभार्थियों की पूरी सूची उपलब्ध करवा पाना बिल्कुल असंभव था। कम्प्यूटरीकृत व्यवस्था के बगैर, जब भी इस बारे में प्रश्न पूछे जाते, किसानों की सूची उपलब्ध करवा पाना संभव नहीं था।

डीबीटी के परिणामस्वरूप दोनों सीजन के दौरान राजकोष में उल्लेखनीय बचत हुई। हालांकि यह परिवर्तित व्यवस्था की सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण उपलब्धि नहीं है। नयी व्यवस्था का प्रमुख लाभ यह है कि यह छोटे और हाशिये पर मौजूद किसानों का समावेशन करती है और उन्हें सशक्त बनाती है, जिनकी पुरानी 'स्रोत पर' व्यवस्था के दौरान ज्यादा बात नहीं सुनी जाती थी। इसने बहुत पारदर्शक ढंग से सही लाभार्थियों को लक्षित करना मुमकिन बनाया है। छोटे और हाशिये पर मौजूद किसान कृषि विभाग के पोर्टल पर स्वयं ऑनलाइन पंजीकृत कराने के बाद अब पात्रता की भावना के साथ निर्धारित दुकानों का रुख कर रहे हैं। इस व्यवस्था से लीकेज रुकी है, कागज पर होने वाले लेन–देन रुख गए हैं, सस्ते बीजों का खुले बाजार में पहुंचना थम गया है और व्यवस्था में पारदर्शिता आई है।

प्रमाणित बीज तीन वर्षों के लिए पुनःचक्रित किए जा सकते हैं, और किए जाने चाहिए। इससे पहले इस पर नजर रखने की कोई व्यवस्था नहीं थी, इसलिए बड़े और प्रभावशाली किसान, हर साल नए प्रमाणित बीज ले जाया करते थे। डीबीटी की बदौलत, तत्परता से उपलब्ध आंकड़ों की वजह से, प्रमाणित बीज अगले

रबी सीजन के दौरान, किसानों के नए समूह को उपलब्ध कराए जा सकते हैं। इससे नए बीजों के तेजी से प्रसार के जरिए विज्ञान के लाभ का त्वरित वितरण सुनिश्चित होगा, जिसके परिणामस्वरूप उत्पादकता और उत्पादन में वृद्धि होगी।

नई व्यवस्था ने राज्यों के विविध कृषि–जलवायु क्षेत्रों के लिए नियोजन के उद्देश्य के लिए बहुत ही पुख्ता आंकड़े तैयार किए हैं। इसके परिणामस्वरूप विभाग और किसानों के बीच बड़े पैमाने पर नए सिरे से सम्पर्क कायम हुआ है, जो प्रौद्योगिकी के विस्तार के उद्देश्यों के लिए लाभकारी होगा।

डीबीटी व्यवस्था का एक अन्य रोचक लाभ बीज स्टोर के प्रभारियों द्वारा किए जाने वाले अस्थायी गबन का बंद होना है! किसानों से संग्रहित धनराशि राजकोष में जमा करानी होती है। 'स्रोत पर' व्यवस्था में, इसकी निगरानी उचित ढंग से नहीं की जाती थी, जिसकी परिणति अस्थायी गबन में होती थी। अब, सरकार के आदेश के अनुसार, किसानों से एकत्र की गई धनराशि को राजकोश में जमा कराने के पश्चात ही किसानों के खातों में सब्सिडी हस्तांतरित की जा सकती है। इससे यह सुनिश्चित हो रहा है कि जल्द से जल्द सब्सिडी प्राप्त करने के लिए उतावले किसानों के दबाव के कारण किसी तरह के गबन नहीं हो पा रहे हैं, उनसे एकत्र की गई धनराशि को जल्द से जल्द जमा कराना होता है। विभाग के अधिकारी, जो पहले इस परिवर्तित व्यवस्था को अपनाने के इच्छुक नहीं थे, इस लाभ का अहसास होने के बाद अब खुशी महसूस कर रहे हैं।

हालांकि कृषि संबंधी कच्चे माल या इनपुट्स के लिए डीबीटी की व्यवस्था में दो प्रमुख चुनौतियां हैं। पहली, किसानों द्वारा अग्रिम भुगतान और दूसरी बटाई पर खेती करने वालों को सम्मिलित नहीं किया जाना है, क्योंकि वे ज़मीन के 'मालिक' नहीं हैं और इसलिए वे पंजीकृत भी नहीं हैं। दूसरी चुनौती को भूमि पट्टा कानूनों में परिवर्तन के माध्यम से सुलझाया जा सकता है। अग्रिम भुगतान के मसले का समाधान किसान क्रेडिट कार्ड (केसीसी) के उपयोग के माध्यम से किया जा सकता है। किसानों को बैंकों के द्वारा उनकी जोत के आकार के आधार पर तीन लाख रुपये तक की ऋण सीमा प्रदान की गई है। इस ऋण सीमा का उपयोग अग्रिम भुगतान के लिए किया जा सकता है और तदानुसार सब्सिडी किसान के बैंक खाते में भेजी जा सकती है।

यह पूरा ऑपरेशन बड़े पैमाने पर उत्तर प्रदेश के सभी 75 जिलों में लागू है। ऐसे में इसे आसानी से भारत के अन्य राज्यों में भी दोहराया जा सकता है। यह पूरा ऑपरेशन सॉफ्टवेयर द्वारा संचालित होता है इसलिए पुरानी व्यवस्था की तुलना में इसका प्रचालन आसान है। इसके लिए सिर्फ राज्यों को नई व्यवस्था अपनाने का दृढ़ निश्चय करने की आवश्यकता है, जो यकीनन किसानों के ज्यादा अनुकूल और पारदर्शी है।

प्रौद्योगिकी हमारी व्यवस्थाओं को ज्यादा समावेशी, पारदर्शी और जवाबदेह बनाने के लिए हमें निरंतर आधार पर समाधान उपलब्ध करवा रही है। व्यवस्था को किसानों के अनुरूप बनाने के लिए और कृषि क्षेत्र की कुरीतियां मिटाने के लिए, बीजों से शुरुआत करनी होगी! जैसे ही ठोस आंकड़े तैयार होंगे और परिवेश अनुकूल हो जाएगा, ऐसे में उर्वरक और अन्य जिंसों की ओर रुख करना स्वाभाविक परिणाम होगा।

(लेखक उत्तर प्रदेश के कृषि विभाग में प्रधान सचिव हैं।)
अनुवादः रीता कपूर

पाठकों / लेखकों से अनुरोध

आप "कुरुक्षेत्र" पत्रिका के नियमित पाठक/लेखक हैं तो आप जरूर चाहेंगे कि आपके गांव या उसके आसपास आ रहे बदलाव के बारे में सभी लोगों को पता चले। आपके गांव या आसपास जरूर ऐसी कोई महिला/पुरुष या स्वयंसेवी संस्था होगी जिसके बूते पर बदलाव की बयार चली हो। सरकारी प्रयासों के चलते भी आपके गांव का कुछ कायापलट तो हुआ ही होगा।

अगर आपके पास ऐसी कोई भी जानकारी है तो आप उसे अपने शब्दों में लिखकर (फोटो सहित) भेजें। लेख छपने पर उसका उचित पारिश्रमिक भी दिया जाएगा। रचना दो प्रतियों में टाइप की हुई हो (kruti dev font 010) और उसके साथ ई–मेल तथा मौलिकता का प्रमाणपत्र संलग्न हो। हमारा पता है – वरिष्ठ संपादक, कुरुक्षेत्र (हिंदी), कमरा नं. 655, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली–110003, आप हमें लेख ई–मेल भी कर सकते हैं।

ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

भारतीय कृषि परंपरा को पुर्नस्थापित करना जरूरी

—अमित कुमार सिंह

''हालांकि आज किसानी से पशुधन का महत्व लगभग नदारद–सा हो रहा है। लोग मशीनों और रसायनों पर अधिक निर्भर होते चले जा रहे हैं। इसके पीछे सबसे बड़ा कारण उनके द्वारा त्वरित परिणाम की महत्वाकांक्षा होती है। लेकिन उनको नहीं पता है कि उनकी इस महत्वाकांक्षा ने कृषि, कृषक और पशुधन के प्राकृतिक चरण को नष्ट करने का प्रयास किया है, उनके द्वारा प्रकृति को चुनौती देने का प्रयत्न किया गया है।''

कृषि या खेती के लिए किसान जितना महत्वपूर्ण होता है उतना ही पशु भी महत्वपूर्ण होता है। एक किसान के लिए बिना पशुओं के अच्छी खेती की उम्मीद करना व्यर्थ है। ठीक ऐसे ही एक पशु के लिए भी कृषि या उसकी तमाम आहार सम्बन्धी चीजों की पैदावार बिना कृषक के कहां संभव है। अतः कृषि, कृषक और पशुओं का एक जबर्दस्त सहज व स्वाभाविक चक्रण होता है। इस चक्रण के मंद होने पर अथवा कमजोर होने पर तीनों एक साथ समान ढंग से प्रभावित होते हैं। इसलिए यदि हम सोचें कि खेती में पैदावार बढ़ाने के लिए पशुओं का सहारा न लेकर बहुत ज्यादा मशीनों और रसायनों पर निर्भरता बढ़ा ली जाए अथवा यदि किसान यह सोच लें कि पशुधन को नजरअंदाज करके खेती पर ही ध्यान केन्द्रित कर लिया जाए तो स्वभावतः यह निश्चय मानिए कि कृषि, कृषक और पशुओं के इस चक्रण को कमजोर करने की दिशा में यह एक प्रयास होगा, और इस चक्रण का कमजोर होना न तो कृषि के हित में होगा और ना ही किसान के हित में। इसलिए हमें इस चक्र का संतुलन बनाकर ही चलना होगा और आज के परिप्रेक्ष्य में खासतौर पर पशुपालन की ओर ध्यान देना बहुत जरूरी है क्योंकि लम्बे समय से पशुओं का नाता किसान और खेती दोनों से औसत दूर होता देखा गया है।

मानव हित के लिए पशुओं को पालने का मुद्दा मनुष्यों तथा पशुओं के बीच सम्बन्ध पर पशुओं की स्थिति तथा लोगों के दायित्व पर निर्भर करता है। हमने देखा है कि किसानों की देखभाल में रह रहे पशुओं को अनावश्यक रूप से कष्ट नहीं उठाना पड़ता है। हालांकि आज किसानी से पशुधन का तत्व लगभग नदारद–सा हो रहा है। लोग मशीनों और रसायनों पर अधिक निर्भर होते चले जा रहे हैं। इसके पीछे सबसे बड़ा कारण उनके द्वारा त्वरित परिणाम की महत्वाकांक्षा होती है। लेकिन उनको नहीं पता है कि उनकी इस महत्वाकांक्षा ने कृषि, कृषक और पशुधन के प्राकृतिक चक्रण को नष्ट करने का प्रयास किया है, उनके द्वारा प्रकृति को चुनौती देने का प्रयत्न किया गया है।

इसका परिणाम भी हमारे सामने है कि आज जबकि जनसंख्या इतनी अधिक बढ़ गई है, कृषि के लिए रुचिकर लोग आपको ढूंढ़ने से भी कम मिलेंगे और उसमें भी जो हैं उनमें वह कौशल अब नहीं रहा क्योंकि उनकी प्रकृति ही अब वह नहीं रही। यंत्रीकरण के भयानक दौर में उनमें वो क्षमताएं भी अब विलुप्त हो रही हैं। अब उनके शरीर में वह बल नहीं बचा, मौसम के अनुकूल काम करने की उनकी क्षमताएं भी नष्ट हो रही हैं और सबसे महत्वपूर्ण यह कि किसानी के लिए रह रहकर उनकी

रुचियां भी डगमगाती नजर आती रहती हैं। इन सबका एकमात्र कारण कृषि, कृषक और पशुधन के चक्र का कमजोर होना, उसका शिथिल होना है।

आज लोग भूलते जा रहे हैं कि पशु मनुष्य को मनुष्य से ही नहीं बल्कि प्रकृति से भी प्रेम करना सिखाता है। प्रकृति–प्रदत्त समस्त चीजों से लगाव पैदा करता है पशुपालन। जैसे वनों में रहने वाले का प्रकृति के साथ एक आत्मीय लगाव हो जाता है, ठीक वैसे ही पशुओं के बीच रहने में भी उनसे आपका एक आत्मीय लगाव होता है। ये एक प्राकृतिक परम्परा है। इसे पशुओं के बीच रहने वाला ही समझ सकता है। वर्तमान समय में किसानों के पुनरोत्थान और ग्रामीण सशक्तिकरण के लिए तो पशुधन बहुत ही महत्वपूर्ण है, क्योंकि ग्रामीण जीवन की धुरी यानी कृषि से पशुपालन या पशुओं का एक स्वाभाविक सम्बन्ध होता है।

यदि हम देखें तो कृषि उत्पादन के लिए जितनी भूमि की आवश्यकता है, पशुओं की आवश्यकता उससे कम नहीं है। बैलों द्वारा कृषि कार्य करना हमारी चिर पुरातन एवं दोषमुक्त परम्परा है। कृषि से उत्पादित खाद्य पदार्थों से लोगों का पेट भरकर उनकी भूख मिटती है और वे जीवित रहते हैं, अखाद्य कृषि पदार्थों की उपज से पशुओं का पेट भरता है, उनकी भूख मिटती है और इससे उन्हें जीवन–प्रवाह प्राप्त होता है। वस्तुतः पशुपालन भी जनजीवन का पूरक तत्व है।

जैविक प्रक्रिया है कृषि

'विराट पुरुष' अर्थशास्त्री नाना जी देशमुख के विचारों को समझते हुए देखते चलें तो हमें वहां भी स्पष्ट होता दिखाई पड़ता है कि पश्चिम में जन्मी औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप गांवों की शहरीकरण की ओर उन्मुक्तता और खेती के मशीनीकरण की प्रक्रियाएं आरम्भ हुईं। वहां यंत्रशक्ति द्वारा जमीन की जुताई की जाने लगी। अधिक से अधिक अन्न उत्पादन की लालसा से कृत्रिम खाद का आविष्कार हुआ। कृत्रिम खाद के उपयोग से उत्पादन में वृद्धि हुई, इसलिए उसका उपयोग बढ़ता गया। पश्चिम का जीवन शहरी प्रधान होने के कारण नगरों की आवश्यकता पूर्ति को ही प्राथमिकता दी जाने लगी। पश्चिम में पशुओं के विकास का मात्र इतना ही अर्थ रह गया कि नगरवासियों के लिए आधिकाधिक दूध एवं मांस कैसे उपलब्ध कराया जाए। उन्हें यह मालूम होना चाहिए कि कृषि उत्पादन के लिए काम आई हुई भूमि की उपजाऊ शक्ति की क्षतिपूर्ति जैविक खाद द्वारा ही सम्भव है। रासायनिक उर्वरक भूमि की उर्वरा–शक्ति नहीं बढ़ा पाते हैं, वह भूमि में उत्तेजना मात्र का निर्माण करते हैं। इससे कृषि उत्पादन में कुछ समय के लिए बढ़ोतरी अवश्य होती है, लेकिन ये प्राकृतिक उपजाऊ–शक्ति पुष्ट नहीं करते हैं। रासायनिक खाद के लगातार प्रयोग से तथाकथित उन्नत देशों में लाखों एकड़ उपजाऊ भूमि बंजर बन गई है। इसलिए अब वही पश्चिमी देश रासायनिक खाद का विकल्प खोजने में जुटे हैं। रासायनिक खाद के लगातार प्रयोग से फसलों पर रोगों का भी प्रकोप बढ़ता है। उससे बचने के लिए जहरीली दवाओं के छिड़काव की विधि अपनानी पड़ती है। लेकिन ये विषैली दवाएं केवल फसलों पर होने वाले कीट को ही नहीं नष्ट करतीं, बल्कि वे उनसे उत्पादित खाद्य पदार्थों का सेवन करने वाले लोगों को भी अपनी चपेट में ले लेती हैं। फलस्वरूप, जिन देशों में रासायनिक खादों एवं कीटनाशक दवाओं का आविष्कार हुआ है, वहां के निवासी अब जैविक खादों से उत्पादित खाद्य पदार्थों को ही खाना पसन्द करने लगे हैं। अब आधुनिक कृषि वैज्ञानिकों को भी महसूस होने लगा है कि भारत में जैविक खाद पर आधारित परम्परागत कृषि–पद्धति ही अधिक वैज्ञानिक है और इसके लिए कृषि, कृषक और पशुओं का सुचक्र आवश्यक है।

वास्तव में कृत्रिम खाद के पक्षधर पश्चिम के कृषि विशेषज्ञ यह देखकर हैरान हैं कि कृत्रिम खाद के उपयोग के कारण उनके यहां मिट्टी की उर्वरा शक्ति का तेजी से ह्रास हो रहा है जबकि भारत एवं चीन जैसे प्राचीन देशों में एक ही खेत में हजारों साल से खेती होने के बाद भी उर्वरा शक्ति कम नहीं हुई है। कई देशों के कृषि विशेषज्ञों ने भारत की परम्परागत कृषि पद्धति का सूक्ष्म अध्ययन भी किया है। वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि इसका श्रेय गोबर की प्राकृतिक खाद एवं जुताई के लिए पशुओं के उपयोग को जाता है। इसका अंदाजा हम इसी से लगा सकते हैं कि देश की तकरीबन 70–80 फीसदी कृषि भूमि का विकास मात्र देशी बैलों के अभाव में अवरुद्ध हुआ है।

पशु बनाम यंत्र–शक्ति

किसी ने ठीक ही विचार किया है कि बैल हमारी खेती का धुरा है। ट्रैक्टर को लाकर हमने अपना सब महल ढहा लिया है। हालांकि नाना जी का 'अर्थशास्त्री' भी कहता है कि कुछ लोग मशीनों में अडिग श्रद्धा रखते हैं जो भारत के खेतों में भी पश्चिम के तरीके से ट्रैक्टरों से कृषि के पक्षधर हैं, लेकिन भारत के लिए ट्रैक्टर आदि पूरी तरह से अनुपयुक्त हैं, क्योंकि पहले तो हमारे यहां खेत बहुत छोटे हैं और एक किसान की जोत भी इतनी कम है कि उसमें ट्रैक्टर नहीं चलाया जा सकता। चूंकि प्रायः ट्रैक्टर के लिए खेत बड़े किए जाते हैं और उनमें सामूहिक खेती के अवलम्बन का भी सुझाव दिया जाता है। इसलिए ट्रैक्टर की मांग पैदा की जाती है लेकिन सामूहिक खेती भारत के जन और भूमि के अनुपात, प्रजातंत्रीय पद्धति, बेकारी के निवारण, प्रति एकड़ अधिकतम उत्पादन, कृषि के मानकों के निर्धारण की असम्भवनीयता, किसान का भूमि प्रेम, और हमारे जीवन मूल्य इन सभी दृष्टियों से हमारे लिए अनुपयुक्त हैं। किन्तु यदि हम सामूहिक खेती को छोड़ भी दें तो भी हम भारत की जलवायु एवं भूमि में होने वाले

मृदा अपरदन के कारण भी बहुत बड़े–बड़े खेत जिनमें ट्रैक्टर चलाए जा सकें, नहीं रख सकते हैं। इसलिए भारत में कृषि के लिए पशु ही उपयुक्त हैं। हम भारत में कृषि, कृषक और पशुओं के समन्वय को बरकरार रखकर ही सही पद्धति से भारतीय कृषि परम्परा को परिभाषित कर सकते हैं। ऐसे में किसानों के पास पशुपालन एक सशक्त हथियार है।

वास्तव में भारतीय अर्थव्यवस्था में एक किसान के लिए कृषि एवं पशुपालन दोनों का ही विशेष महत्व है। यही कारण है कि यदि कृषि क्षेत्र में हम 1–2 प्रतिशत की वार्षिक दर प्राप्त कर रहे हैं तो वहीं पशुपालन से 4–5 प्रतिशत। इस तरह से कृषि से सम्बद्ध पशुपालन व्यवसाय में ग्रामीणों को रोजगार प्रदान करने तथा उनके सामाजिक एवं आर्थिक–स्तर को ऊंचा उठाने की अपार सम्भावनाएं हैं। साथ ही भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि, किसान और पशुपालन का एक बेजोड़ बंधन भी है जो परस्पर एक–दूसरे पर आश्रित हैं और एक–दूसरे की उन्नति में सहायक हैं।

डेयरी उत्पाद

सकल घरेलू कृषि उत्पाद में पशुपालन का 28–30 प्रतिशत का योगदान सराहनीय है, जिसमें दुग्ध एक ऐसा उत्पाद है जिसका योगदान सर्वाधिक है। भारत में विश्व की कुल संख्या का 15 प्रतिशत गायें हैं जिनसे देश के कुल दुग्ध उत्पादन का 43 प्रतिशत भाग प्राप्त होता है। वहीं 55 प्रतिशत भैंसें हैं जिनसे 53 फीसदी तक दूध प्राप्त होता है। इस तरह भारत लगभग 12.18 करोड़ टन दूध का उत्पादन करके विश्व में सर्वोच्च स्थान पर है जोकि एक मिसाल है। यह उपलब्धि पशुपालन से जुड़े विभिन्न पहलुओं जैसे मवेशियों की नस्ल, पालन–पोषण, स्वास्थ्य एवं आवास प्रबंधन इत्यादि में किए गए अनुसंधान एवं उसके प्रचार–प्रसार का परिणाम है। इसके लिए स्तनधारी पशुधन का प्रयोग दूध के स्रोत के रूप में होता है, जिसे आसानी से संसाधित करके अन्य डेयरी उत्पादों में परिवर्तित किया जा सकता है, जैसे दही, पनीर, मक्खन, आइसक्रीम, आदि। पशुओं से डेयरी उत्पादों को तैयार कर बेचने पर किसान को मौद्रिक लाभ होता है जिससे प्राप्त धन को वह खेती में निवेश करते हैं। इस तरह से पशुओं से प्राप्त डेयरी उत्पादों का उपयोग कर किसान कृषि के लिए मौद्रिक रूप से सशक्त होता है, लेकिन इसके लिए उसका चक्रण भी मजबूत होना परम आवश्यक है।

गोबरः एक अमूल्य उर्वरक

पशुओं का गोबर कृषि भूमि की उर्वरा शक्ति को सदैव बनाए रखने की क्षमता रखता है। वह फसल की जैविक प्रक्रिया को पुष्ट एवं संवर्धित करता है। पशु दूध दें या ना दें लेकिन प्रतिदिन भारी मात्रा में वह गोबर अवश्य देते हैं। उनके इस गोबर की कीमत निष्क्रिय पशुओं द्वारा खाए जाने वाले चारे और पानी से कई गुना अधिक होती है। वास्तव में पशुपालन को हम किसानों की घरेलू खाद का कारखाना भी कह सकते हैं। उसके लिए किसानों को अलग से कोई पूंजी नहीं लगानी पड़ती है। फलस्वरूप पशु किसान की समृद्धि के स्थायी साधन हैं।

खेती की उर्वरा शक्ति बढ़ाने एवं फसल के लिए पोषक तत्व उपलब्ध कराने में गोबर की खाद से अच्छा दूसरा कोई अन्य पदार्थ नहीं है। खेत में गोबर की खाद का प्रयोग किया गया हो तो उसमें उगने वाली फसलों पर साधरणतः कीटाणुओं का आक्रमण नहीं होता है। इसके बावजूद भी यदि किसी कारण से कीटाणुओं का प्रकोप हुआ भी तो दो से तीन प्रतिशत गोमूत्र पानी में मिलाकर फसल पर छिड़काव करने से फसलों को केवल कीटाणुओं के आक्रमण से होने वाले रोगों से ही मुक्ति नहीं मिलती है, बल्कि फसल पनपने में भी फसलों को सहायता मिलती है और उत्पादन भी बढ़ता है। पशुपालन खेतों की सभी आवश्यकताएं पूरी कर किसानों को हर प्रकार से आत्मनिर्भर बनाता है। उन्हें ट्रैक्टर या रासायनिक खादों के लिए अतिरिक्त व्यय कर उद्योगपतियों पर निर्भर रहने की आवश्यकता नहीं रहती। खेतों को तैयार करने के महत्वपूर्ण दिनों में डीजल पम्पों पर हफ्तों तक लाईन लगाकर समय बर्बाद नहीं करना पड़ता है। धन व्यय करने की मुसीबत से छुटकारा मिलता है। फलतः किसानों के लिए खुशहाली का मार्ग प्रशस्त होता है। साथ ही इससे बेकारी पर काबू भी पाया जा सकता है।

इसके अलावा गोबर की खाद का प्रयोग उसे खेतों में डाल कर फसल की पैदावार को बढ़ाने के लिए किया जाता है। यह एक महत्वपूर्ण कारण है जिससे ऐतिहासिक रूप से पौधे तथा पालतू पशु एक–दूसरे से महत्वपूर्ण रूप से जुड़े हुए हैं। गोबर की खाद का प्रयोग आग जलाने के लिए ईंधन के रूप में भी किया जा सकता है तथा पशुओं के रक्त व हड्डियों का प्रयोग भी उर्वरक के रूप में किया जाता है। इसके अतिरिक्त दीवारों तथा फर्शों के प्लास्टर के लिए भी किसान द्वारा गोबर को प्रयोग में लिया जाता है। ग्रामीण अंचल में अधिकांश मकान सीमेंट और पक्के फर्श के नहीं होते हैं। वहां फर्श और दीवारों की लिपाई–पुताई गोबर से की जाती है। इसके कारण घरों में कीटाणुओं का प्रकोप सम्भव नहीं होता। यदि घर में किसी प्रकार की दुर्गंन्ध अनुभव हुई तो वह गोबर की पुताई से मिट जाती है। इस तरह से निष्क्रिय पशु भी किसानों के उत्तम जीवन के लिए उपयोगी हैं और यदि किसान का जीवन स्वस्थ और उत्तम रहेगा तो वह उत्कृष्ट कृषि का उत्पादन भी करेगा।

भूमि प्रबंधन

पशुओं की चराई को कभी–कभी खरपतवार तथा झाड़–झंखाड़ के नियंत्रण के रूप में प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए

उन क्षेत्रों में जहां जंगल की आग लगती है, बकरियों तथा भेड़ों का प्रयोग सूखी पत्तियों को खाने के लिए किया जाता है जिससे जलने योग्य सामग्री कम हो जाती है तथा आग का खतरा भी कम हो जाता है। इसके अलावा यंत्रों की सहायता से कृषि कार्य करने से भूमि का क्षरण बहुत अधिक होता है, जबकि पशुओं के द्वारा यह समस्या नगण्य है।

खाद्य सुरक्षा में पशुपालन

हरित क्रान्ति से पहले भारत में अनाजों का उत्पादन इतना ज्यादा नहीं था। तब उस समय खाद्य सुरक्षा के लिए खाद्य के पहले विकल्प अनाज के बाद पशुओं से प्राप्त होने वाला दूध ही उपयोग में लाया जाता था, जिसको लोग अलग–अलग तरीकों से प्रयोग करते थे। आज जो लोग अपनी उम्र के छठवें–सातवें दशक में हैं, वह जिक्र करने पर बताते हैं कि हम लोगों को तो बहुत लम्बे समय तक केवल दूध और घी ही खाकर रहना पड़ता था। पता चला कि अंतिम समय में फसल ही नहीं हुई तो हम पूरी तरह से पशुओं के ऊपर ही आश्रित हो जाते थे। आज भी गांव और शहर दोनों जगहों पर लोग पशुओं से प्राप्त दूध और उससे सम्बन्धित अन्य उत्पादों को अपने एक समय के भोजन के तौर पर प्रयोग में लाते हैं। अतः आज भी किसान अपने भोजन का एक बड़ा हिस्सा पशुओं से प्राप्त करता है और बिना उस भोजन के वह अपने को मजबूत और कृषि के योग्य नहीं मानता है। इस तरह से खाद्य सुरक्षा में पशुपालन के योगदान से खेती के लिए किसान योग्य बनता है।

किसानों की दिनचर्या

पशुपालन भारतीय ग्रामीण समाज की दिनचर्या का एक हिस्सा था जो किसानों को आलस्य के चंगुल से दूर रखता है। किसान सुबह उठकर पशुओं को चारा खिलाता है, फिर उसका दूध निकालता है। उसे दोपहर में पशुओं को पानी पिलाना होता है तथा उनके लिए शाम की और अगले दिन हेतु भोजन की व्यवस्था भी उन्हें करनी होती है। यानी किसान की पूरी दिनचर्या में पशुओं का एक बड़ा हिस्सा है अर्थात् उनकी पूरी दिनचर्या पशुओं को ही केन्द्र में रखकर बनी है। आज शहरों की बीमारियां गांवों तक पहुंच रही हैं। इसका सबसे बड़ा कारण ही यही है कि अब गांव और शहरों की जीवनशैली में समानता आती जा रही है। गांव के किसानों की जीवनशैली से अब पशु बाहर होते जा रहे हैं।

यद्यपि पहले की अपेक्षा आज पशुपालन और खेती का सम्बन्ध निश्चित रूप से कमजोर हुआ है, किन्तु इसका अर्थ यह कतई नहीं है कि इस सम्बन्ध की प्रासंगिकता ही समाप्त हो गई है। वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन के कारण मानसून में काफी ज्यादा अनियमितता आ गई है। इस अनियमितता के कारण पता चलता है कि कभी बहुत ज्यादा बारिश हो गई, कभी बारिश ही नहीं हुई तो कभी–कभी बर्फीली बारिश भी हो जाती है। चूंकि भारत की कृषि पूरी तरह से प्रकृति पर ही निर्भर है। सिंचित क्षेत्र मात्र एक तिहाई ही है। तकरीबन अस्सी फीसदी भाग सिंचाई को छूता नहीं है। ऐसे में जब किसान खेती करता है तो वह उन्नत बीजों का उपयोग करता है, महंगे रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का इस्तेमाल भी करता है और वह ट्रैक्टर से जुताई भी करवाता है। यानी वो एक महंगी लागत के साथ अपने खेतों को तैयार करने के लिए उतरता है। अब ऐसी स्थिति में जब जलवायु परिवर्तन के कारण सही समय पर बारिश यदि नहीं हुई, जिसकी सम्भावना अधिक रहती है तो किसान हताश होता है और यह कोई मामूली हताशा नहीं होती है। इसमें किसान आत्महत्या तक की स्थिति में पहुंच जाता है।

अब ऐसे में प्रश्न उठता है कि किसान की इस हताशा को कैसे कम किया जा सकता है। तब इसका सबसे पहला हल यही है कि खेती में किसानों की लागत को कम किया जाए। इसके लिए आवश्यक है कि उसके द्वारा महंगे कीटनाशकों और रासायनिक खादों की जगह जैविक खाद का इस्तेमाल किया जाए। ट्रैक्टर, जिनमें महंगे ईंधन आदि की अतिरिक्त लागत लगती है, उसके स्थान पर जुताई आदि के लिए पशुओं का इस्तेमाल किया जाना चाहिए। यानी हमें खेती में उपयोग होने वाली मौद्रिक लागत को कम करना है। चूंकि मौद्रिक लागत ज्यादा न लगने से लाभ यह होगा कि यदि बारिश होती है तो किसानों के लिए अच्छा है, उनको लाभ ही होगा और यदि बारिश न भी हो तो कम से कम किसानों के पास से घर की पूंजी तो नहीं लगेगी अर्थात् यदि घर में अनाज आएगा नहीं तो कम से कम घर से अनाज जाएगा तो नहीं। ये पशुपालन के कारण एक बहुत बड़ा फायदा है। इसके अलावा किसानों की फसल के नष्ट होने का एक कारण कीटों का भी है। यह शिकायत अक्सर आती है कि इस दफा की पूरी फसल कीटों ने चट कर दी। ऐसे में यह ध्यान रखने योग्य होगा कि हम जितना ज्यादा नाइट्रोजन का प्रयोग खेतों में करेंगे फसलों में कीट लगने की संभावनाएं उतनी ही अधिक होंगी। इसलिए जैविक या गोबर की खाद ही एक कारगर विकल्प है। इससे फसलों को कीटों से बचाया जा सकता है। ध्यान रहे कि कृषि के लिए आवश्यक गोबर की खाद प्राप्त करने के लिए पशुओं की आवश्यकता होती है जो बिना किसानों के सहयोग के कृषि के लिए प्राप्त नहीं होगा। अतः भारतीय कृषि परम्परा को पुनः स्थापित करने के लिए और उत्तम उत्पादन को प्राप्त करने के लिए हमें कृषि, कृषक और पशुओं के समीकरण का सन्तुलन अवश्य ही करना होगा।

(लेखक तमाम पत्र–पत्रिकाओं और वेब–पोर्टल्स पर सामाजिक, राजनीतिक और नीतिगत मामलों पर लिखते रहते हैं। वर्तमान में ऑल इंडिया रेडियो, नई दिल्ली में पत्रकार हैं।)

ई–मेलः amitrajpoot.ar@gmail.com

भारत में डेयरी उद्योग : सफलताएं और चुनौतियां

—गौरव कुमार

तमाम सफलताओं के बावजूद डेयरी क्षेत्र में शामिल किसान और पशुपालक आज कई चुनौतियों से जूझ रहे हैं। न उनके पास उचित तकनीक पहुंच पाई है ना चारा और पोषण सुरक्षा है। ऐसे में कल्याणकारी नीतियों को अमल में लाने की सख्त जरूरत है।

आज भारत में कृषि के सहयोगी व्यवसाय के रूप में डेयरी उद्योग का नाम सबसे पहले लिया जाता है। भारत में सर्वाधिक पशु धन है, विश्व में सबसे अधिक दुग्ध उत्पादन भारत में ही होता है और भारत की जलवायु इस क्रियाकलाप के लिए सर्वाधिक उपयुक्त भी है। देश में पशुधन की उत्पादकता में वृद्धि करने के लिए समय–समय पर काफी प्रयास किए जाते रहे हैं। इन सारे प्रयासों का नतीजा है कि दसवीं योजना के अंत तक दुग्ध उत्पादन 102.6 मिलियन टन से बढ़कर ग्यारहवीं योजना के अंत तक 127.9 मिलियन टन के स्तर तक पहुंच गया। यह गौर करने लायक है कि आज भी देश में अधिकांश दूध का उत्पादन छोटे, सीमांत किसानों और भूमिहीन मजदूरों द्वारा किया जाता है। हालांकि इन्हें अब सहकारिता के अंतर्गत लाया जा रहा है, और मार्च 2014 तक लगभग 15.46 मिलियन किसानों को 162186 ग्राम–स्तरीय डेयरी सहकारी समितियों के तहत लाया गया है। सहकारी दुग्ध संघों ने पिछले वर्ष के 33.5 मिलियन किलोग्राम की तुलना में वर्ष 2013–14 के दौरान 34.2 मिलियन किलोग्राम दूध प्रतिदिन के औसत से खरीदा है और 2.1 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की है। सहकारी क्षेत्रों द्वारा तरल दूध की बिक्री वर्ष 2013–14 के दौरान 29.4 मिलियन लीटर प्रतिदिन पहुंच गई है जो पिछले वर्ष के मुकाबले 5.8 प्रतिशत अधिक है। आज भारत में दूध का राष्ट्रीय ग्रिड स्थापित हो चुका है जो करीब 800 शहरों और कस्बों तक ताजे दूध की आपूर्ति करता है।

सरकारी प्रयास

बारहवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान योजना आयोग ने सिद्धांततः पशुपालन क्षेत्र के लिए 7628 करोड़ रुपये, डेयरी क्षेत्र के लिए 4976 करोड़ रुपये जारी किए थे। इसके अलावा कई वार्षिक और समय–समय पर जारी की गई योजनाओं और नीतियों के माध्यम से इस क्षेत्र के विकास के लिए तमाम प्रयास किए गए हैं। कृषि मंत्रालय के अंतर्गत डेयरी विभाग द्वारा कई योजनाएं और कार्यक्रम इस क्षेत्र के विकास और इसके प्रोत्साहन के लिए चलाए जा रहे हैं। इन योजनाओं और कार्यक्रमों में कुछ प्रमुख योजनाएं एवं कार्यक्रम इस प्रकार हैं–

श्वेत क्रान्ति – देश में दूध उत्पादन बढाने की दिशा में संगठित रूप से पहला क्रांतिकारी प्रयास वर्ष 1970 से आरम्भ हुआ जिसे हम 'श्वेत क्रान्ति' के नाम से जानते हैं। इसे ऑपरेशन फ्लड प्रथम का नाम दिया गया। इसमें देश के 10 राज्यों को शामिल किया गया था। ऑपरेशन फ्लड का उद्देश्य किसानों की आय को बढाने योग्य गतिविधियों का विकास करना था। ऑपरेशन फ्लड भारतीय डेयरी उद्योग को जर्जरता की स्थिति से उबारकर सुदृढ़ स्थिति में पहुंचाने का पहला सुनियोजित प्रयास था।

गहन डेयरी विकास कार्यक्रम – इस योजना को पर्वतीय एवं पिछड़े क्षेत्रों में 100 प्रतिशत अनुदान सहायता आधार पर मार्च 1993–94 में आरम्भ किया गया था। मार्च 2005 में इसे संशोधित करके सघन डेयरी विकास कार्यक्रम नाम दिया गया। बाद में इस योजना को फरवरी 2014 में शुरू की गई राष्ट्रीय बोवाइन प्रजनन तथा डेयरी विकास कार्यक्रम में शामिल कर दिया गया।

राष्ट्रीय बोवाइन प्रजनन तथा डेयरी विकास कार्यक्रम – इस योजना का पुनर्गठन फरवरी 2014 को पूर्व की चल रही चार योजनाओं के विलय के साथ किया गया। ये योजनाएं थीं – सघन डेयरी विकास कार्यक्रम, गुणवत्तापूर्ण और स्वच्छ दुग्ध उत्पादन के लिए अवसंरचना का सुदृढ़ीकरण, सहकारिताओं को सहायता तथा राष्ट्रीय गोपशु और भैंस प्रजनन परियोजना। इस

योजना के क्रियान्वयन के लिए बारहवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान 1800 करोड़ रुपये का बजटीय प्रावधान किया गया। इस योजना के दो घटक हैं–राष्ट्रीय बोवाईन प्रजनन कार्यक्रम तथा राष्ट्रीय डेयरी विकास कार्यक्रम। राष्ट्रीय बोवाईन प्रजनन कार्यक्रम का उद्देश्य किसानों को उनके द्वार तक गुणवत्तापूर्ण कृत्रिम गर्भाधान सेवाओं की व्यवस्था करना, उच्च सामाजिक–आर्थिक महत्ता वाली चयनित स्वदेशी बोवाईन नस्लों का संरक्षण, विकास तथा प्रसार करना है। राष्ट्रीय डेयरी विकास कार्यक्रम का उद्देश्य उपभोक्ता से किसानों तक संपर्क स्थापित करते हुए गुणवत्तापूर्ण दूध के उत्पादन हेतु शीत श्रृंखला अवसंरचना सहित अवसंरचना का सृजन और सुदृढ़ीकरण करना है। साथ ही ग्राम–स्तर पर डेयरी सहकारी समितियों/उत्पादक कंपनियों को सुदृढ़ करना तथा संभावित रूप से व्यवहार्य दुग्ध परिसंघों/संघों के पुनर्वास में सहायता करना आदि है।

राष्ट्रीय पशुधन मिशन (एनएलएम) – बारहवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान पशुधन क्षेत्र में तेजी लाने के उद्देश्य से राज्यों के किसानों के लाभ के लिए स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार योजनाएं तैयार और क्रियान्वित करने में अधिक लचीलापन प्रदान करके इस क्षेत्र का सतत विकास करने के मुख्य उद्देश्य से इस योजना को शुरू किया गया था। यह मिशन विभिन्न क्षेत्रों/राज्यों की कृषि जलवायु स्थितियों के अनुसार छोटे व अन्य गौण पशु प्रजाति के विकास के लिए भी सहायता देगा। इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए इस मिशन के अधीन कार्यकलापों के लिए 2800 करोड़ रुपये आवंटित किए गए।

पशु रोगों के लिए राष्ट्रीय नियंत्रण कार्यक्रम – इस योजना को पशु रोगों, जिनसे उत्पादकता पर प्रभाव पड़ता है, के प्रभावी नियंत्रण को ध्यान में रख कर तैयार किया गया है। इसका वर्ष 2014 में विस्तार करते हुए कुल 313 जिलों में लागू किया गया।

केन्द्रीय गोपशु विकास संगठन – इसमें सात केन्द्रीय गोपशु प्रजनन फार्म एक केन्द्रीय हिमित वीर्य उत्पादन एवं प्रशिक्षण संस्थान तथा चार केन्द्रीय गोयूथ पंजीकरण इकाइयां शामिल हैं। ये सभी संस्थान आनुवांशिक रूप से उन्नत संकर सांड, बछड़े, अच्छे किस्म के हिमित वीर्य के उत्पादन तथा गोपशु एवं भैंस के बेहतर जर्मप्लाज्म की पहचान हेतु स्थापित किए गए हैं ताकि देश में इन पशुधनों की बेहतर नस्ल की प्राप्ति हो पाए।

राष्ट्रीय डेयरी योजना (चरण–1) – प्रजनन और आहार के उन्नत प्रबंधन के जरिए दुग्ध उत्पादकों/किसानों की आय में वृद्धि करने और उत्पादकता बढ़ाने के लिए डेयरी सहकारिताओं के प्रयासों को सुदृढ़ करने के लिए सरकार ने 2011–12 से इस योजना को शुरू किया है। यह योजना 2242 करोड़ रुपये के कुल निवेश वाली योजना थी जिसे निम्नलिखित उद्देश्यों के साथ 14 प्रमुख डेयरी राज्यों में क्रियान्वित किया जा रहा है–

भारत में दूध उत्पादन की स्थिति

वर्ष	दूध उत्पादन (मिलियन टन)
1991–92	56.03
2000–01	98.07
2010–11	121.80
2020 लक्ष्य	235.00

दुधारु पशुओं की उत्पादकता बढ़ाने में सहायता करना ताकि दूध की तेजी से बढ़ती हुई मांग को पूरा करने के लिए दूध के उत्पादन में वृद्धि की जा सके। संगठित दुग्ध प्रसंस्करण क्षेत्र तक ग्रामीण दुग्ध उत्पादकों की और अधिक पहुंच बढ़ाने में सहायता करना।

डेयरी उद्यमशीलता विकास योजना – देश में दूध का उत्पादन बढ़ाने के लिए तथा डेयरी क्षेत्र में निजी निवेश को बढ़ाने व स्वरोजगार के अवसरों के माध्यम से गरीबी उपशमन के उद्देश्य से इस योजना की शुरुआत सितम्बर 2010 में की गई। इस योजना का क्रियान्वयन नाबार्ड के माध्यम से किया जा रहा है जो सामान्य वर्ग के लाभार्थियों को परियोजना लागत की 25 प्रतिशत तक तथा अनु.जाति एवं अनु.जनजाति के लाभार्थियों को परियोजना लागत के 33.33 प्रतिशत तक की बैंक एंडिड कैपिटल सब्सिडी के साथ बैंक ऋण के माध्यम से वित्तीय सहायता प्रदान करती है।

राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड – इसकी स्थापना 1965 में की गई थी। यह एक सांविधिक निकाय है जिसका मुख्यालय आणंद (गुजरात) में है। 1987 में इसे राष्ट्रीय महत्व की संस्था तथा एक सांविधिक निकाय घोषित किया गया था। यह संस्था योजनाओं को बढ़ावा देती है तथा सहकारी पद्धति पर डेयरी तथा अन्य कृषि आधारित उद्योगों के लिए कार्यक्रम आयोजित करती है। साथ ही इनके क्रियान्वयन में भी मदद करती है।

डेयरी उद्योग की चुनौतियां और समाधान

पशुपालन क्षेत्र में पशु स्वास्थ्य–पोषण और पशु रोगों पर प्रभावकारी नियंत्रण, आहार और चारे की कमी आदि तमाम चुनौतियां भरी पड़ी हैं। देश में डेयरी उद्योग के सम्मुख वर्तमान में कुछ प्रमुख प्रभावी चुनौतियां निम्नलिखित हैं–

अनुसंधान और विकास – आधुनिक डेयरी उद्योग तमाम तकनीकी क्षमता पर निर्भर करता है। इसके लिए हमें अपने देश के अंदर मौजूदा स्थिति, जलवायु और अन्य कारकों के आधार पर तकनीकी विकास करने की जरूरत है। यद्यपि राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड और अनुसंधान तथा विकास प्रयोगशाला इस दिशा में महत्वपूर्ण पहल कर रहे हैं। तथापि इस दिशा में

हमारी तैयारी और भी बढ़ाने की जरूरत है। नित नई तकनीक के प्रयोग से इस क्षेत्र के विकास की नई इबारत लिखी जा सकती है।

पशु चारा, पोषण और रोगों की समस्या – देश में पशुओं के चारे और पोषण की समस्या के साथ उनमें होने वाले रोगों की रोकथाम की पर्याप्त व्यवस्था की गई है किन्तु इस दिशा में अब भी हम पूर्णतः निदान प्राप्त नहीं कर पाए हैं। आज देश के कई हिस्सों में चारागाह की उपलब्धता काफी कम या नहीं के बराबर है। इसके पीछे का एक कारण यह भी है कि खेती का ध्यान चारा उत्पादन से नकदी फसल या खाद्यान्न फसल की तरफ अधिक है। भूमि की कमी के कारण चारागाह सिमटते गए हैं। देश में कराए गए एक अध्ययन के मुताबिक भारत में उपलब्ध पशुचारा महज 52 प्रतिशत पशुओं की जरूरतों को पूरा करने में सक्षम है। यह स्थिति विभिन्न राज्यों में अलग–अलग है। दूसरी तरफ काफी संख्या में पशु संक्रमित और अन्य खतरनाक रोगों से ग्रसित होते हैं और मर जाते हैं। संस्थागत तंत्र के अंतर्गत शामिल पशुओं की स्थिति तो कुछ हद तक बेहतर है, किन्तु वैसे क्षेत्र में जहां ग्रामीण व्यापक–स्तर पर मवेशी पालते हैं और डेयरी उद्योग में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं, उनकी स्थिति अत्यंत खराब है।

दूध उत्पादन की क्षमता के बावजूद संस्थागत तंत्र से अलगाव – आज डेयरी उद्योग की प्रगति व्यापक–स्तर पर महसूस की जाती है, किन्तु देश के कई ऐसे ग्रामीण क्षेत्र हैं जहां किसान मवेशी पालन करते हैं और डेयरी उद्योग में सहयोग करते हैं। वे संस्थागत तंत्र से विलग हैं। ये किसान ऐसे संस्थागत तंत्र से विलग हैं जिसके द्वारा वे अधिक लाभप्रद स्थिति में खुद को महसूस कर सकें। इसके अलावा उन्हें बाजार की कीमत का लाभ भी उचित रूप में नही मिल पाता। उनका इस उद्योग में पर्याप्त शोषण भी होता है। ऐसे गांव जहां की जलवायु और अन्य स्थिति पशुपालन तथा दुग्ध उत्पादन के लिए अनुकूल है तथापि वे इन संस्थागत तंत्रों से अलग–थलग हैं। इन लोगों को अपने जीविकोपार्जन वाले काम में संस्थागत स्रोतों से ऋण की प्राप्ति में भी काफी दिक्कत आती है। अतः जरूरत इस बात की भी है कि इन्हें ऋण प्रवाह के संस्थागत स्रोतों से जोड़ा जाए। इन क्षेत्रों की यदि पहचान कर उन्हें पर्याप्त सुविधा और संसाधन मुहैया कराए जाएं तो इसका लाभ व्यापक–स्तर पर मिल सकेगा। आज जरूरत है ऐसे क्षमता वाले क्षेत्रों का पर्याप्त रूप से दोहन किया जाए।

पशुपालकों का शोषण – देश में ऐसे तमाम किसान और पशुपालक हैं जो बाजार और डेयरी उद्योग को अपना महत्वपूर्ण योगदान देने के बावजूद उचित हक प्राप्त नहीं कर पाते। इस क्षेत्र की यह एक महत्वपूर्ण आर्थिक और सामाजिक चुनौती है। दूध की उपलब्धता का आधार यही किसान हैं जबकि इन्हें काफी कम कीमत पर अपना दूध व्यापारियों या निजी कंपनियों के हाथों बेचना पड़ता है। इसके अलावा इनका दूध भी काफी कम खरीदा जाता है। एक आंकड़े के मुताबिक देशभर में किसानों और पशुपालकों द्वारा उत्पादित कुल दूध का मात्र 15 प्रतिशत दूध ही संगठित क्षेत्र की कंपनियों द्वारा प्रसंस्कृत किया जाता है। इसके अलावा इनके शोषण का एक रूप यह भी है कि सहकारी कम्पनियां जो दूध बाजार में उपभोक्ताओं को 25–26 रुपये की दर से बेचती हैं उन्हें वे किसानों से मात्र 13–14 रुपये की दर से खरीदती हैं। इस तरह से किसान लगातार ठगे हुए महसूस करते हैं और अंततः यह व्यवसाय उन्हें लाभप्रद नहीं लगता और इससे मुक्ति पाना चाहते हैं। उपर्युक्त समस्याओं के अलावा अन्य कई समस्याएं डेयरी उद्योग को रुग्ण बना रही हैं। आज जरूरत है पर्याप्त बेहतर नीति और निगरानी तंत्र के साथ इसके विकास के प्रयास किए जाएं।

वैसे सरकारी–स्तर पर कई योजनाएं और कार्यक्रम चलाए गए हैं तथापि उन योजनाओं और कार्यक्रमों की बेहतर निगरानी तथा क्रियान्वयन सुनिश्चित किया जाना जरुरी है। आज देश में किसान वैसे ही कृषिगत समस्याओं से जूझ रहे हैं। जब हम डेयरी क्षेत्र के विकास की बात करते हैं तो कहीं न कहीं इसमें किसान और पशुपालकों के विकास की बात भी निहित होती है।

डेयरी क्षेत्र के साथ दो चीजें जुड़ी हुई हैं। पहला, संस्थागत तंत्र और दूसरा असंस्थागत या असंगठित तंत्र। जहां भी सहकारिता का प्रभाव पहुंचा है उससे कुछ हद तक इस उद्योग को लाभ मिला है। लेकिन जो किसान इस तंत्र से वंचित हैं उन्हें इसके दायरे में लाने और उनकी क्षमता के दोहन की जरूरत है। दूसरी तरफ, इसके अंतर्गत निहित खामियों, शोषण को दूर करना भी नितांत आवश्यक है।

देश में डेयरी उद्यम के विकास के लिए सबसे पहले निरंतर परिस्थितिजन्य अनुसंधान और विकास की बात की जानी चाहिए। आधुनिक और उन्नत किस्म की नस्लों और साथ ही डेयरी की स्थापना पर काम किया जाना चाहिए। देश में चारागाह की अनुपलब्धता के मद्देनजर आज चारा बैंक की अवधारणा प्रबल होती जा रही है। इसके लिए पर्याप्त संरचना बनाने की जरूरत है, जिसका लाभ सभी पशुपालकों को दिया जाना चाहिए। इसके अलावा पशुधन की बीमा, स्वास्थ्य और अन्य कल्याणकारी लाभ योजना किसानों को सहज और सरल रूप में उपलब्ध कराने की जरूरत है। इस प्रकार इन उपायों से हमारे देश के डेयरी उद्योग की विकास गाथा में और भी नए आयाम जुड़ेंगे। भारत की भौगोलिक स्थिति को देखते हुए डेयरी उद्योग का भविष्य काफी सुनहरा है।

(लेखक पी.आर.एस. लैजिस्लेटिव रिसर्च, नई दिल्ली में लैम्प फैलो हैं)
ई–मेलः gauravkumarsss1@gmail.com

खेतीजनित कारोबार से जुड़कर बन रहे हैं स्वावलंबी

—बलवंत सिंह मौर्य

केंद्र सरकार की ओर से ग्रामीण भारत के युवाओं को रोजगार उपलब्ध कराने की दिशा में लगातार काम किया जा रहा है। सरकार की मंशा है कि कृषि क्षेत्र से जुड़े रोजगार को बढ़ावा दिया जाए। इसी के तहत भारत के ग्रामीण इलाके में कृषि आधारित कारोबार को गति देने की दिशा में कार्य किया जा रहा है। जिन लोगों के पास खेत हैं वे कृषि-आधारित रोजगार के जरिए एक साथ कई तरह का मुनाफा कमा सकते हैं। यदि कोई युवा पशुपालन से जुड़ता है तो वह दूध के साथ ही अपने खेत के लिए जैविक खाद भी हासिल कर लेता है। पशुओं को खिलाने के लिए उसे चारे की खोज भी नहीं करनी पड़ती है बल्कि चारा खेत से ही तैयार हो जाता है। कुछ ऐसी ही स्थिति मत्स्य पालन की भी है।

उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जिले के मड़िहान निवासी किसान अरुण सिंह पटेल के पास करीब 10 बीघा खेत है। वह खेती के साथ पशुपालन और मधुमक्खी पालन करते हैं। अरुण की मानें तो पशुपालन से उनकी खेती संवर गई है। क्योंकि खेत में उन्होंने रासायनिक खाद का प्रयोग बंद कर दिया है। सिर्फ जैविक खाद का इस्तेमाल करके आलू, गेहूं और सब्जी पैदा कर रहे हैं। इसका बड़ा फायदा यह है कि जैविक उत्पाद के नाम पर उनकी उपज की मुंहमांगा कीमत मिल रही है। अरुण की तरह ही तमाम किसान हैं, जो खेती के पुरानी परंपरागत तरीके को नए मॉडल में विकसित करके खेती को फायदे का सौदा बनाए हुए हैं। वे खेती के साथ ही खेती आधारित पशुपालन, मत्स्य पालन और बकरी पालन कर रहे हैं। वे रासायनिक खाद से तैयार किए गए उत्पादन से कहीं ज्यादा मुनाफा जैविक खाद के उत्पाद से हासिल कर रहे हैं। जो लोग पशुपालन कर रहे हैं, उन्हें रासायनिक खाद खरीदने की जरूरत नहीं पड़ती है। वे कंपोस्ट व घर में तैयार जैविक खाद खेत में डालकर रासायनिक खाद का पैसा बचा रहे हैं। खेतों में मधुमक्खी पालन किए जाने से परांगण क्रिया तेज होती है। इससे उत्पादन बढ़ता है। कुछ इसी मंशा को ध्यान में रखकर सरकार की ओर से भी कृषि संवर्धन की दिशा में काम किया जा रहा है। कृषि आधारित उद्योग के आसानी से विकसित होने के पीछे एक बड़ा कारण है इस उद्योग को सरकार गंभीरता से ले रही है। एक तरफ केंद्र सरकार की ओर से भरपूर मदद की जा रही है तो दूसरी तरफ राज्य सरकारों को भी कृषि से जुड़े कामकाज के लिए जिम्मेदार बनाया जा रहा है। लगातार कृषि विश्वविद्यालयों की ओर से कृषि विज्ञान केंद्र खोले जा रहे हैं। इनके जरिए हर किसान को तकनीकी ज्ञान उपलब्ध कराया जा रहा है। तमाम युवा भी पढ़ाई–लिखाई के बाद कृषि आधारित उद्योग से जुड़ रहे हैं। नई तकनीक से खेती और उससे जुड़ी चीजों को एक–दूसरे का पूरक बनाया जा रहा है। बेहतर प्रबंधन के जरिए खेती और खेती से जुड़े काम को सशक्त बनाया जा रहा है। इसका सीधा फायदा यह भी हो रहा है कि ग्रामीण इलाके के युवा अपने आसपास के दूसरे युवाओं के साथ मिलकर खेती को नया आयाम दे रहे हैं। अभी तक पशुपालन, बकरी पालन, मत्स्य पालन सूकर पालन आदि के लिए पैसे की जरूरत पड़ती थी। ऐसे में शिक्षित युवाओं के सामने पैसे का संकट बड़ी चुनौती थी. लेकिन सरकार ने इसका भी रास्ता ढूंढ दिया। बैंकों को कृषि आधारित कारोबार के लिए ऋण देने के लिए पाबंद कर दिया गया है। अब बैंक खुद गांवों में युवाओं को पशुपालन से जुड़े काम के लिए ऋण उपलब्ध करा रहे हैं। ऐसे में कृषि आधारित रोजगार के

जरिए युवा खुद स्वावलंबी बन रहे हैं। वे कृषि आधारित रोजगार से जुड़कर ग्रामीण भारत की अर्थव्यवस्था को संवारने में अपना योगदान दे रहे हैं। खेती के साथ पशुपालन, मुर्गीपालन सुकर पालन, मधुमक्खी पालन, मस्त्य पालन कीटपालन आदि सहित तमाम ऐसे काम है। जिसे घर बैठे किया जा सकता है और अपनी आर्थिक स्थिति मजबूत की जा सकती है।

कृषि आधारित डेयरी विकास

भारतीय डेयरी क्षेत्र ने नौवीं योजना के बाद काफी बेहतर स्थिति हासिल कर ली है। भारत प्रतिवर्ष करीब 130 मिलियन टन दुग्ध उत्पादन के साथ दुयिा का सिरमौर बना हुआ है। मार्च 2012 तक करीब 14.78 मिलियन किसानों को 1,48,965 ग्राम–स्तर की डेयरी सहकारी समितियों के दायरे में लाया जा चुका है। कुल पशुधन के करीब 87.7 प्रतिशत का प्रतिनिधित्व 4 हेक्टेयर से कम की भूमि वाले गरीब तबके के किसानों, लघु और उपमध्यम संचालकों द्वारा किया जाता है। डेयरी कारोबार शुरू करने के इच्छुक युवा विकास भवन में सीधे मुख्य विकास अधिकारी से मिल सकते हैं। वे मुख्य पशु चिकित्साधिकारी अथवा संबंधित ब्लॉक के बीडीओ से संपर्क करके प्रोजेक्ट तैयार कर सकते हैं। इस कारोबार पर प्रदेश सरकारों का खासा जोर है। इस वजह से डेयरी उद्योग से जुड़ने वाले युवाओं की हर संभव मदद की जा रही है। जिले में स्थित कृषि विज्ञान केंद्र के पशुपालन विशषज्ञ से भी विस्तृत जानकारी ली जा सकती है। पशुपालन विशेषज्ञ के संपर्क में रहने से पशुओं को होने वाली विभिन्न बीमारियों का भी समय पर निदान किया जा सकता है। नाबार्ड के माध्यम से लागू होने वाली इस योजना के अंतर्गत वित्तीय सहायता व्यावसायिक, सहकारी, शहरी और ग्रामीण बैंकों के माध्यम से सामान्य श्रेणी के आवेदकों को 25 प्रतिशत की पूंजीगत सब्सिडी और अनुसूचित जाति और जनजाति के लाभार्थियों को 33 प्रतिशत की सहायता केंद्रीय सहायता के तौर पर प्रदान की जाती है। इसके अलावा जिला–स्तर पर डेयरी सहकारी समितियां भी सक्रिय हैं। इन समितियों को राष्ट्रीय डेयरी डेवलपमेंट बोर्ड से संबद्ध किया गया है। इन दिनों उत्तर प्रदेश में कई स्तरों पर डेयरी उद्योग स्थापित किया जा रहा है। इसमें वृहद डेयरी से लेकर मिनी डेयरी तक शामिल हैं।

बकरी पालन से जुड़ लाभ कमाएं

बकरी पालन प्रायः सभी जलवायु में कम लागत, साधारण आवास, सामान्य रखरखाव तथा पालन–पोषण के साथ संभव है। इसके उत्पाद की बिक्री हेतु बाजार सर्वत्र उपलब्ध हैं। इन्हीं कारणों से पशुधन में बकरी का एक विशेष स्थान है। गरीब किसानों एवं खेतीहर मजदूरों के जीविकोपार्जन का एक साधन भी है बकरी पालन। बकरी पालन स्वरोजगार का एक प्रबल साधन बन रहा है। मांस, दूध एवं रोंआ (पशमीना एवं मोहेर) के लिए बकरी पालन किया जाता है। बकरियां प्रायः चारागाह पर निर्भर रहती हैं। ऐसे में इनके चारे के लिए कोई खास मशक्कत की भी जरूरत नहीं होती है। संसार में बकरियों की कुल 102 प्रजातियां उपलब्ध हैं। जिसमें से 20 भारतवर्ष में हैं। अपने देश में पायी जाने वाली विभिन्न नस्लें मुख्य रूप से मांस उत्पादन हेतु उपयुक्त हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली की ओर से भारत की विभिन्न जलवायु की उन्नत नस्लें जैसे ब्लैक बंगला, बारबरी, जमनापारी, सिरोही, मारबारी, मालावारी, गंजम आदि के संरक्षण एवं विकास से संबंधित योजनाएं चलायी जा रही हैं। इसमें ब्लैक बंगला प्रजाति की बकरियां पश्चिम बंगाल, झारखंड, असम, उत्तरी उड़ीसा एवं बंगाल में पायी जाती है। इसके शरीर पर काला, भूरा तथा सफेद रंग का छोटा रोंआ पाया जाता हैं। अधिकांश (करीब 80 प्रतिशत) बकरियों में काला रोंआ होता है। इसी तरह बीटल नस्ल पंजाब प्रांत के पाली जाती है जबकि राजस्थान में सिरोही नस्ल प्रमुख है। इसके अलावा स्विट्जरलैंड की अल्पाइन, यूरोप की एंग्लोनुवियन की संकर प्रजाति भी अब भारत में पाली जा रही है। बाजार में मांस की मांग दिन–प्रतिदिन बढ़ रही है जिसके कारण बकरियों के मूल्यों में भी काफी वृद्धि हुई है। ब्लैक बंगाल मांस उत्पादन हेतु उपयुक्त है। छह माह की उम्र में औसतन 14–15 किलो ग्राम वजन प्राप्त कर लेता है। मांस उत्पादन वजन का 50 प्रतिशत मानकर चलें तब एक बकरे से 7–7.5 किलोग्राम मांस मिलेगा। अधिक वजन के लिए नर बच्चों का बंध्याकरण 2 माह की उम्र में कराना चाहिए तथा 15 किलोग्राम वजन प्राप्त कर लेने के बाद मांस हेतु उपयोग में लाना चाहिए। बकरी पालन कारोबार से लगे लोगों को इन्हें रोगों से बचाव पर भी ध्यान देना चाहिए। कई बार बकरी के रेवड़ में गोल कृमि, फीता कृमि, फ्लूक, एमफिस्टोम और प्रोटोजोआ आदि प्रमुख परजीवी लग जाते हैं। इससे इनका वजन कम होने लगता है और दस्त की वजह से परेशान रहते हैं। ऐसे में तुरंत पशु चिकित्सिक से सलाह लेनी चाहिए। इसी तरह पेट फूलना, आफरा, जोन्स रोग, थनैल आदि की भी शिकायत होने पर तुरत पशु चिकित्सक से संपर्क करना चाहिए। बकरी तथा इनके बच्चों को नियमित रूप से कृमिनाशक दवा देनी चाहिए। बकरी पालन की विस्तृत जानकारी, इससे जुड़ी योजनाओं के तहत ऋण लेने एवं प्रशिक्षण के लिए ब्लॉक मुख्यालय, विकास भवन में स्थित मुख्य पशुचिकित्साधिकारी कार्यालय में संपर्क करना चाहिए। बकरी पालन की तकनीकी जानकारी के लिए जिले में स्थित कृषि विज्ञान केंद्र पर संपर्क किया जा सकता है। यहां मौजूद पशुपालन विशेषज्ञ सभी समस्याओं का सामाधान करते हैं।

भेड़ पालन

बकरी की तरह ही भेड़ पालन किसानों के लिए काफी उपयोगी है। कुछ समय पहले तक राजस्थान में भेड़ पालन लोगों का प्रमुख व्यवसाय था। खेती योग्य जमीनें कम होने की वजह से ज्यादातर मध्यम वर्ग भेड़ पालन से ही जुड़ा हुआ था। हालांकि बाद में खेती योग्य जमीनें बढ़ी और भेड़ के साथ ही कृषि जनित दूसरे कारोबार भी बढ़े। भेड़ ग्रामीण अर्थव्यवस्था एवं सामाजिक संरचना से जुड़ा है। इससे हमें मांस, दूध, ऊन, जैविक खाद तथा अन्य उपयोगी सामग्री मिलती है। इनके पालन–पोषण से भेड़ पालकों को अनेक फायदें हैं। छोटे किसान भेड़–बकरी पालन कर अपनी आजीविका चला सकते हैं। भेड़पालक भी नई–नई तकनीकियां अपनाकर भेड़ पालन को व्यवसायी दृष्टि से कर अधिक लाभ कमा सकता है।

भेड़ का मनुष्य से सम्बन्ध आदि काल से है तथा भेड़ पालन एक प्राचीन व्यवसाय है। भेड़ पालक भेड़ से ऊन तथा मांस तो प्राप्त करता ही है, भेड़ की खाद भूमि को भी अधिक उपजाऊ बनाती है। भेड़ कृषि–अयोग्य भूमि में चरती है, कई खरपतवार आदि अनावश्यक घासों का उपयोग करती है तथा ऊंचाई पर स्थित चरागाह जोकि अन्य पशुओं के अयोग्य है, उसका उपयोग करती है। भेड़पालक भेड़ों से प्रति वर्ष मेमने प्राप्त करते हैं। मेढों को प्रजनन के लिये छोडने से पहले यह निश्चित कर लें कि उन्हें उस क्षेत्र में पाई जाने वाली संक्रामक बीमारियों के टीके लगा दिए गए हैं तथा उनको कृमिनाशक औषधि से नहलाया जा चुका है। मैंढ़े को प्रजनन के लिये अधिक से अधिक आठ सप्ताह तक छोड़ना चाहिए तथा निश्चित अवधि के पश्चात उन्हें रेवड़ से अलग कर देना चाहिए। भेड़ में प्रायः 12–48 घंटे का रतिकाल होता है। इस काल में ही औसतन 20–30 घंटे के अन्दर पाल दिलवाना चाहिए। रति चक्र प्रायः 12–24 दिनों का होता है। यदि एक से अधिक मेंढे प्रजनन हेतु छोड़ने हैं तो नर मेढों का कोई निश्चित पहचान (कान पर नम्बर) लगा दें ताकि बाद में यह पता चल सके कि किस नर की प्रजनन शक्ति कमजोर है या उससे उत्पादित मेमनें सन्तोषजनक नहीं हैं ताकि समय अनुसार उस नर को बदला जा सके। इसी तरह मेमने के पैदा होने के 8–12 सप्ताह के पश्चात उसे मां से अलग कर लें तथा तत्पश्चात उसको संतुलित आहार देना प्रारम्भ करें। आमतौर पर मांस के लिए मालपुरा, जैसलमेरी, मांडिया, मारवाड़ी, नाली शाहाबादी एवं छोटानागपुरी तथा ऊन के लिए बीकानेरी, मेरीनो, कौरीडेल, रमबुये इत्यादि का चुनाव करना चाहिए। इसी तरह दरी ऊन के लिए मालपुरा, जैसलमेरी, मारवाड़ी, शाहाबादी एवं छोटा नागपुरी इत्यादि मुख्य है। महीन ऊन बच्चों के लिए उपयोगी है तथा मोटे ऊन दरी तथा कालीन के लिए अच्छे माने गए हैं। गर्मी तथा बरसात के पहले ही इनके शरीर से ऊन की कटाई कर लेनी चाहिए। शरीर पर ऊन रहने से गर्मी तथा बरसात का बुरा प्रभाव पड़ता है। जाड़ा जाने के पहले ही ऊन की कटाई कर लेनी चाहिए। जाड़े में स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। शरीर के वजन का लगभग 40–50 प्रतिशत मांस के रूप मे प्राप्त होता है।

मुर्गीपालन के जरिए बन रहे हैं स्वावलंबी

ग्रामीण भारत में कृषि से आधारित कारोबार में पोल्ट्री उद्योग भी है। भारत सरकार इस ग्रामीण उद्योग को बड़े पैमाने पर विकसित करने की नीतियों को लागू कर रही है। भारत की स्थिति पर गौर करें तो करीब 66.45 बिलियन अंडों का उत्पादन होता है। पोल्ट्री मांस उत्पादन करीब 2.5 मिलियन टन है। वर्तमान में प्रति व्यक्ति अंडों की उपलब्धता प्रति वर्ष 55 अंडे है। कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (एपीईडीए) की रिपोर्ट के अनुसार 2011–12 में करीब 457.82 करोड़ रुपए के पोल्ट्री उत्पादों का निर्यात हुआ था। गुड़गांव में स्थित केंद्रीय पोल्ट्री प्रदर्शन परीक्षण केंद्र (सीपीपीटीसी) पर लेयर और ब्रोएलर प्रकारों के प्रदर्शन का परीक्षण करने की जिम्मेदारी है। यह केंद्र देश में उपलब्ध विभिन्न आनुवांशिक स्टॉक संबंधी बहुमूल्य जानकारी देता है। पोल्ट्री क्षेत्र के समग्र विकास के लिए एक नई योजना शुरू की गई है। इसमें तीन घटक यानी 'राज्य पोल्ट्री फार्मों को सहायता', 'ग्रामीण बैकयार्ड पोल्ट्री विकास' और 'पोल्ट्री एस्टेट' हैं। अपने इलाके के खंड विकास अधिकारी से संपर्क करके प्रोजेक्ट रिपोर्ट तैयार करें। इसके जिला उद्योग केंद्र से भी संपर्क किया जा सकता है। मुख्य विकास अधिकारी कार्यालय में भी प्रोजेक्ट की विस्तृत जानकारी ली जा सकती है। जिले में स्थिति कृषि विज्ञान केंद्र पर कार्यरत पशुपालन वैज्ञानिकों से भी इस संबंध में जानकारी हासिल की जा सकती है।

बत्तख पालन

भारत में बड़ी संख्या में बत्तख पाली जाती हैं। बत्तखों के अण्डे एवं मांस लोग बहुत पसंद करते हैं, अतः बत्तख पालन व्यवसाय की हमारे देश में बड़ी संभावनाएं हैं। बत्तख ऐनाटीडे प्रजातियों के पक्षियों का एक आम नाम है जिसमे कलहंस और हंस भी शामिल हैं। बत्तख कई अन्य सह–प्रजातियों व परिवारों में बांटी हुई है पर फिर भी यह मोनोफेलटिक नहीं कहलाई जाती है। बत्तखें कई बार इन जैसे ही दिखने वाली या संबंधित पक्षियों से जो कि इसी प्रकार से विचरण करते है जैसेकि लूंस, ग्रेबेस, कूटस आदि से ब्रह्मित की जाती है। पहले घरों में अंडे के लिए पाले जाने वाले इस जीव के पालन को अब रोजगार के रूप में देखा जा रहा है। पिछले दिनों से बत्तखों को घरों में विशेष रूप से पाला जा रहा है जो काफी फायदा भी देता है। उन्नत नस्ल की बत्तख 300 से अधिक अण्डे एक साल में देती हैं। बत्तख के अण्डे का वजन 65 से 70 ग्राम होता है। बत्तख अधिक रेशेदार आहार पचा सकती हैं।

साथ ही पानी में रहना पसंद होने से बहुत से जलचर जैसे–घोंघा वगैरह खाकर भी आहार की पूर्ति करते हैं। अतः बत्तखों के खानपान पर अपेक्षाकृत कम खर्च करना पड़ता है। बत्तख दूसरे एवं तीसरे साल में भी काफी अण्ड़े देती रहती हैं। अतः व्यावसायिक दृष्टि से बत्तखों की उत्पादक अवधि अधिक होती है। मुर्गियों की अपेक्षा बत्तखों की उत्पादक अवधि अधिक होती है। मुर्गियों की अपेक्षा बत्तखों में कम बीमारियां होती हैं। बहता हुआ पानी बत्तखों के लिए काफी उपयुक्त होता है, किन्तु अन्य पानी के स्रोत वगैरह में भी बत्तख पालन अच्छी तरह किया जा सकता है।

एमू पालन से बने स्वावलंबी

भारत में इन दिनों एमू पालन का कारोबार बड़े पैमाने पर चल रहा है। इसके जरिए कम लागत में अधिक मुनाफा कमाया जा सकता है। इसके मांस, अंडे, तेल, त्वचा तथा पंखों की अच्छी कीमत मिलती है। ये पक्षी कई तरह की मौसमी दशाओं के लिए अनुकूलित होते हैं। भले ही एमू और शतुरमुर्ग भारत के लिए नए हैं, पर एमू पालन को यहां महत्व मिल रहा है। एमू की गर्दन लंबी होती है, उसका सिर अपेक्षाकृत छोटा होता है, तीन अंगुलियां होती हैं और शरीर पंखों से ढंका रहता है। एमू के प्राकृतिक भोजन में शामिल हैं– कीट, पौधों के कोमल पत्ते तथा चारे। ये विभिन्न प्रकार की सब्जियां तथा फल खाते हैं, जैसे गाजर, खीरा और पपीता इत्यादि। मादा एमू नर से कुछ ऊंची होती है, खासकर प्रजनन काल में जब नर भूखा भी रह सकता है। मादा एमू नर से अधिक प्रभावी होती है। एमू 30 सालों तक जीवित रहता है। यह 16 से अधिक सालों तक अंडे देता है। इन पक्षियों को जोड़े में या झुंडों में पाला जा सकता है। भारत में एमू तथा शतुरमुर्ग का मांस उच्च गुणवत्ता वाला माना जाता है, जिसमें कम चर्बी, कम कॉलेस्ट्रॉल होते हैं, और ये अच्छे स्वाद वाला होता है। एमू की खाल उम्दा और मजबूत प्रकार की होती है। पैर की त्वचा विशेष पैटर्न की होती है, इसलिए कीमती होती है। एमू की चर्बी से तेल का उत्पादन किया जाता है, जिसमें आहारीय तथा औषधीय (जलन भगाने वाले गुण) तथा कॉस्मेटिक गुण होते हैं।

मधुमक्खी पालन से खेती को दे बढ़ावा

मधुमक्खी पालन कृषि आधारित उद्योग है मधुमक्खियां फूलों के रस को शहद में बदल देती हैं और उन्हें अपने छत्तों में जमा करती हैं। जंगलों से मधु एकत्र करने की परंपरा लंबे समय से लुप्त हो रही है। बाजार में शहद और इसके उत्पादों की बढ़ती मांग के कारण मधुमक्खी पालन अब एक लाभदायक और आकर्षक उद्यम के रूप में स्थापित हो चला है। मधुमक्खी पालन के उत्पाद के रूप में शहद और मोम आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। मधुमक्खी पालन में कम समय, कम लागत और कम ढांचागत पूंजी निवेश की जरूरत होती है। कम उपज वाले खेत से भी शहद और मधुमक्खी के मोम का उत्पादन किया जा सकता है। मधुमक्खियां खेती के किसी अन्य उद्यम से कोई ढांचागत प्रतिस्पर्धा नहीं करती हैं। मधुमक्खी पालन का पर्यावरण पर भी सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। मधुमक्खियां कई फूलवाले पौधों के परागण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इस तरह वे सूर्यमुखी और विभिन्न फलों की उत्पादन मात्रा बढ़ाने में सहायक होती हैं। मधुमक्खी पालन के लिए छत्ता तैयार किया जाता है। यह एक साधारण लंबा बक्सा होता है, जिसे ऊपर से ढंका जाता है। बक्से का आकार 100 सेंटीमीटर लंबा, 45 सेंटीमीटर चौड़ा और 25 सेंटीमीटर ऊंचा होता है। बक्सा दो सेंटीमीटर मोटा होना चाहिए और उसके भीतर छत्ते को चिपका कर एक सेंटीमीटर के छेद का प्रवेशद्वार बनाया जाना चाहिए। दूसरा बक्सा स्मोकर या धुआं फेंकने वाला होता है। यह दूसरा महत्वपूर्ण उपकरण है। इसे छोटे टिन से बनाया जा सकता है। हम धुआं फेंकने वाले का उपयोग खुद को मधुमक्खियों के डंक से बचाने और उन पर नियंत्रण पाने के लिए करते हैं। भारत में मधुमक्खियों की चार प्रजातियां पायी जाती हैं। पहाड़ी मधुमक्खी, छोटी मधुमक्खी, भारतीय मधुमक्खी। शहद निकालने के लिए मधुमक्खियों को धुआं दिखा कर अलग कर दिया जाता है। शहद को अमूमन अक्तूबर–नवंबर और फरवरी–जून के बीच ही एकत्र किया जाना चाहिए, क्योंकि इस मौसम में फूल ज्यादा खिलते हैं। पूरी तरह भरा हुआ छत्ता हल्के रंग का होता है। इसके दोनों ओर के आधे से अधिक कोष्ठ मोम से बंद होते हैं। कॉलोनी का सप्ताह में एक बार निरीक्षण करना चाहिए और बक्से के किनारे शहद से भरे छत्तों को तत्काल हटा दें। इससे बक्सा हल्का होता रहेगा और तीन–चौथाई भरे हुए शहद के बर्तन को समय–समय पर खाली करना जगह भी बचाएगा। जिस छत्ते को पूरी तरह बंद कर दिया गया हो या शहद निकालने के लिए बाहर निकाला गया हो, उसे बाद में वापस पुराने स्थान पर लगा दिया जाना चाहिए। मधुमक्खी पालन के लिए समय–समय पर सरकार की ओर से अलग–अलग योजनाएं आती हैं। इसमें पालन करने वालों को प्रशिक्षण देने के साथ ही प्रोजेक्ट पर ऋण और छूट की भी सुविधा मिलती है। जिले में कार्यरत मौनपालक अधिकारी अथवा मुख्य विकास अधिकारी कार्यालय, उद्यान विभाग से संपर्क करके योजना के संबंध में विस्तृत जानकारी ली जा सकती है। जिले में स्थित मौन पालक अधिकारी से मधुमक्खी पालन का प्रशिक्षण भी हासिल किया जा सकता है। इस विभाग की ओर से विभिन्न एनजीओ के माध्यम से भी समय–समय पर प्रशिक्षण दिया जाता है।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं। अमर उजाला, गांडीव, जनवार्ता सहित विभिन्न अखबारों में खेती और खेती आधारित मुद्दों पर नियमित लेखन करते रहते हैं)।
ई–मेलः balwant957@yahoo.in

रासायनिकों से मुक्ति का बेहतर विकल्प शून्य बजट कृषि

—अजीत कुमार

अपने नकारात्मक प्रभावों के कारण हरित क्रांति आज हानिकारक साबित हो रही है। देश में पर्यावरण प्रदूषण, भूमिक्षरण, जैव-विविधता क्षरण, वनक्षरण, भूमिगत जलस्तर में गिरावट तथा मच्छरों द्वारा फैलने वाली बीमारियों का दिनोंदिन बढ़ता प्रकोप जैसी गंभीर समस्याओं से निपटने के लिए कृषि के अन्य विकल्पों पर पूरे विश्व में गंभीरता से मंथन चल रहा है। रासायनिक कृषि के विकल्प के तौर पर आज जैविक कृषि, गो-आधारित कृषि, प्राकृतिक कृषि तथा शून्य लागत प्राकृतिक कृषि आदि विकल्पों पर चर्चा चल रही है। इस आलेख में हम शून्य लागत प्राकृतिक कृषि पर चर्चा करेंगे।

उर्वरक वह पदार्थ होता है जो मिट्टी की उर्वरता तथा फसलों की पैदावार बढ़ने के लिए डाला जाता है। परन्तु मिट्टी की उर्वरता और मृदा स्वास्थ्य दोनों अलग–अलग स्थितियां हैं क्योंकि उर्वरक विशेषकर रासायनिक उर्वरक अल्पकालीन रूप से मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाकर बढ़ी हुई पैदावार लेने में उपयोगी सिद्ध होते हैं परन्तु दीर्घकाल में मृदा स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक प्रयोग से भूजल प्रदूषण का खतरा बढ़ता जा रहा है। रासायनिक उर्वरकों में प्रयोग किए जाने वाले नाइट्रोजन नाइट्रेट में विखंडित हो जाते जो मिट्टी से भूजल में मिल जाते हैं। नाइट्रेट जल में घुलनशील होते हैं और लम्बे समय तक जल में बने रहते हैं। और जैसे– जैसे नाइट्रोजन उर्वरकों का प्रयोग बढ़ता जा रहा है, भूजल के प्रदूषित होने की संभावना बढ़ती जा रही है। उर्वरकों में नाइट्रोजन के प्रयोग से न केवल भूजल प्रदूषण के खतरे हैं बल्कि वायु प्रदूषण, मिटटी के क्षारीकरण की संभावनाएं भी बढ़ रही हैं।

शून्य लागत प्राकृतिक कृषि

जीरो बजट का अर्थ है चाहे कोई भी अन्य फसल हो या बागवानी की फसल हो, उसकी लागत का मूल्य 'जीरो' होगा। मुख्य फसल का लागत मूल्य अंतरवर्तीय फसलों के या मिश्र फसलों के उत्पादन से निकाल लेना और मुख्य फसल बोनस रूप में लेना या आध्यात्मिक कृषि का जीरो बजट है। फसलों को बढ़ने के लिए और उपज लेने के लिए जिन–जिन संसाधनों की आवश्यकता होती है वे सभी घर में ही उपलब्ध कराना, किसी भी हालत में मंडी से या बाजार से खरीदकर नहीं लाना। यही जीरो बजट खेती है। हमारा नारा है–गांव का पैसा गांव में, गांव का पैसा शहरों में नहीं। बल्कि शहर का पैसा गांव में लाना ही गांव का 'जीरो बजट' है।

फसलों को बढ़ने के लिए जो संसाधन चाहिए वह उनकी जड़ों के पास भूमि में और पत्तों के पास वातावरण में ही पर्याप्त मात्रा में मौजूद हैं। ऊपर से कुछ भी देने की जरूरत

नहीं क्योंकि हमारी भूमि अन्नपूर्णा है। हमारी फसलें भूमि से केवल 1.5 से 2.0 प्रतिशत लेती है। बाकी 98 से 98.5 प्रतिशत हवा, सूरज की रोशनी और पानी से लेती हैं।

शून्य बजट कृषि के उद्देश्य

- खेती की लागत कम करके अधिक लाभ लेना।
- जमीन/मिट्टी की उर्वराशक्ति को बढ़ाना।
- रासायनिक खाद/कीटनाशकों के प्रयोग में कमी लाना।
- कम पानी/सिंचाई अधिक उत्पादन लेना।
- किसानों की बाजार निर्भरता में कमी लाना।

जीरो बजट/प्राकृतिक खेती के मुख्य घटक

1. आच्छादान

- **मृदाच्छादन –** हम जब दो बैलों से खींचने वाले हल से या कुल्टी (जोत) से भूमि की काश्तकारी या जुताई करते हैं, तब भूमि पर मिट्टी का आच्छादन ही डालते हैं जिससे भूमि के अंतर्गत नमी और उष्णता वातावरण में उड़कर नहीं जाती, बची रहती है।
- **काष्टाच्छादन –** जब हम हमारी फसलों की कटाई के बाद दाने छोड़कर फसलों के जो अवशेष बचते हैं, वह अगर भूमि पर आच्छादन स्वरूप डालते हैं, तो अनंतकोटी जीव–जंतु और केंचुएं भूमि के अंदर–बाहर लगातार चक्कर लगाकर चौबीस घंटे भूमि को बलवान, उर्वरा एवं समृद्ध बनाने का काम करते हैं और हमारी फसलों को बढ़ाते हैं।
- **सजीव आच्छादन –** हम कपास, अरंडी, अरहर, मिर्ची, गन्ना, अंगूर, अमरुद, लीची, इमली, अनार, केला, नारियल, सुपारी, चीकू, आम, काजू आदि फसलों में जो सहजीवी फसलें या मिश्रित फसलें लेते हैं, उन्हें ही सजीव आच्छादान कहते हैं।

2. वाफसा

वाफसा भूमि में हर दो मिट्टी के कणों के बीच, जो खाली जगह होती है, उनमें पानी का अस्तित्व बिल्कुल नहीं होना है, तो उनमें हवा और वाष्पकणों का सममात्रा में मिश्रण/निर्माण होना। वास्तव में भूमि में पानी नहीं, वाफसा चाहिए। यानी हवा 50 प्रतिशत और वाष्प 50 प्रतिशत इन दोनों का सम्मिश्रण चाहिए। क्योंकि कोई भी पौधा या पेड़ अपनी जड़ों से भूमि में से जल नहीं लेता, बल्कि, वाष्प के कण और प्राणवायु के यानी हवा के कण लेता है। भूमि में केवल इतना जल देना है, जिसके रूपांतरण स्वरूप भूमि के अंतर्गत उष्णता से उस जल के वाष्प की निर्मिती हो और यह तभी होता है, जब आप पौधों को या फल के पेड़ों को उनके दोपहर की छांव के बाहर पानी देते हो। कोई भी पेड़ या पौधे की खाद्य पानी लेने वाली जड़ें छांव के बाहरी सरहद पर होती हैं। तो पानी और पानी के साथ जीवामृत पेड़ की दोपहर को बारह बजे जो छांव पड़ती है, उस छांव की आखिरी सीमा के बाहर 1–1.5 फिट अंतर पर नाली निकालकर उस नाली में से पानी देना चाहिए।

3. बीजामृत (बीजशोधन)

इसे गाय का गोबर, गौमूत्र, पानी, चूना व मेड़ की मिट्टी मिलाकर बनाया जाता है। बीजशोधन से बीज जल्दी और ज्यादा मात्रा में उगकर आते हैं। जड़ें गति से बढ़ती हैं और भूमि से पेड़ों पर जो बीमारियों का प्रादुर्भाव होता है, वह नहीं होता है। बुवाई के 24 घंटे पहले बीजशोधन करना चाहिए।

4. जीवामृत

(अ) घन जीवामृत (एक एकड़ खेत के लिए)

गाय का गोबर, गुड़/फलों के गुदा की चटनी, बेसन (चना, उड़द, अरहर, मूंग), मेड़ या जंगल की मिट्टी, गौमूत्र मिलाकर इसे तैयार किया जाता है। इस घन जीवामृत का प्रयोग छः माह तक कर सकते हैं। इसके लिए सात दिन तक छाया में रखे हुए गोबर का प्रयोग करें। गोमूत्र किसी धातु के बर्तन में न ले या रखें। एक बार खेत जुताई के बाद घन जीवामृत का छिड़काव कर खेत तैयार करें।

कीटनाशी दवाएं

उपरोक्त समग्री की ही तरह शून्य बजट कृषि के तहत कीटनाशी दवाओं का निर्माण भी प्राकृतिक तरीके से किया जा सकता है। इसके प्रमुख उदाहरण हैं–

नीमास्त्र (रस चूसने वाले कीट एवं छोटी सुंडी इल्लियां के नियंत्रण हेतु) इसे नीम या इसकी टहनियां, नीम फल, नीम खरी, गोमूत्र, गाय का गोबर आदि के प्रयोग से बनाया जाता है। यह 48 घंटे में तैयार हो जाता है। नीमास्त्र का प्रयोग छः माह तक कर सकते हैं।

ब्रह्मास्त्र (अन्य कीट और बड़ी सूंडी इल्लियां)–इसे गोमूत्र, नीम की पत्ती की चटनी, करंज की पत्तों की चटनी, सीताफल के पत्ते की चटनी, बेल के पत्ते, अंडी के पत्ते की चटनी, धतूरा के पत्ते की चटनी आदि के मिश्रण से बनाया जाता है। इसका प्रयोग छः माह तक कर सकते हैं।

अग्नी अस्त्र (तना कीट फलों में होने वाली सूंडी एवं इल्लियों के लिए) इसका निर्माण गोमूत्र, नीम के पत्ते की चटनी, तम्बाकू का पाउडर, हरी तीखी मिर्च, देशी लहसुन की चटनी आदि के मिश्रण से तैयार किया जाता है। अग्नी अस्त्र का प्रयोग केवल तीन माह तक कर सकते हैं।

(लेखक आईआईएम, कोलकाता के पूर्व छात्र हैं तथा नई दिल्ली स्थित सभ्यता अध्ययन केंद्र में शोधार्थी हैं। भारतीय कृषि, कृषि अर्थशास्त्र व आर्थिक इतिहास आदि इनके पसंदीदा विषय हैं।)
ई–मेलः ajitmayank88@gmail.com

सफलता की कहानी

जय जवान, जय किसान और जय विज्ञान को अमलीजामा पहनाता किसान

—सुधांशु गुप्त

यह सच है कि आज भी हमारे देश का किसान बेहद खराब स्थितियों में जीवनयापन कर रहा है। लेकिन यह तस्वीर का एक पहलू है। तस्वीर का दूसरा पहलू भी है जो धारावाहिक लेखन के दौरान सामने आया। हमने देखा कि हमारे ही देश का किसान अपने आर्थिक संकटों का किस तरह हल निकाल रहा है, किस तरह वह नई तकनीक और खेती की नई विधियों को सीखकर अपने लिए तरक्की के रास्ते बना रहा है, अपनी आय बढ़ाने के लिए किस तरह वह अपने उत्पादों को अलग-अलग रूपों में बेच रहा है, किस तरह आवश्यकता पड़ने पर वह नयी मशीनरी खुद तैयार कर रहा है, जिसका उसके खेतों में ही स्थानीय-स्तर पर इस्तेमाल भी होने लगा है। सफलता की नई इबारत लिखने वाले ये किसान आज खुद भी बेहतर और खुशहाल जीवन जी रहे हैं और दूसरे किसानों को भी ऐसा करने के लिए प्रेरित कर रहे हैं।

डीडी किसान के लिए एक धारावाहिक—कामयाबी की मिसालें लिखते समय बहुत से किसानों को जानने, देखने और समझने का अवसर मिला। किसानों की जो तस्वीर अब तक मीडिया में दिखाई पड़ती है (और जो गलत भी नहीं है) वह काफी चौंकाने वाली है। यह तस्वीर हमें दिखाती है कि देश में किसान आए दिन आत्महत्या कर रहे हैं, बाढ़ सूखे, या अन्य कारणों से इनकी फसलें नष्ट हो रही हैं और मुआवजे के नाम पर इन्हें कुछ नहीं मिल पा रहा। किसानों की यह तस्वीर किसानों की छवि को निहायत गरीब, असहाय और हारे हुए शख्स के रूप में पेश करती है। ऐसा नहीं है कि ये तस्वीर गलत है या मीडिया ने इसके साथ कोई छेड़छाड़ की है। यह सच है कि आज भी हमारे देश का किसान बेहद खराब स्थितियों में जीवनयापन कर रहा है। लेकिन यह तस्वीर का एक पहलू है। तस्वीर का दूसरा पहलू भी है जो धारावाहिक लेखन के दौरान सामने आया। हमने देखा कि हमारे ही देश का किसान अपने आर्थिक संकटों का किस तरह हल निकाल रहा है, किस तरह वह नई तकनीक और खेती की नई विधियों को सीखकर अपने लिए तरक्की के रास्ते बना रहा है, अपनी आय बढ़ाने के लिए किस तरह वह अपने उत्पादों को अलग—अलग रूपों में बेच रहा है, किस तरह आवश्यकता पड़ने पर वह नयी मशीनरी खुद तैयार कर रहा है, जिसका उसके खेतों में ही स्थानीय—स्तर पर भी इस्तेमाल होने लगा है। सफलता की नई इबारत लिखने वाले ये किसान आज खुद भी बेहतर और खुशहाल जीवन जी रहे हैं और दूसरे किसानों को भी ऐसा करने के लिए प्रेरित कर रहे हैं।

ऐसे किसानों की लंबी फेहरिस्त में एक नाम है परमा राम चौधरी का। हिमाचल प्रदेश के मंडी जिले में रहते हैं परमा चौधरी। यूं तो मंडी को एक खूबसूरत पर्यटन स्थल माना जाता है लेकिन यहां के किसानों को वह सारी मुसीबतें झेलनी पड़ती हैं, जो पहाड़ी क्षेत्रों में रहने वाले किसानों के लिए भाग्य की तरह उनके साथ जुड़ी हैं। मंडी में ही एक छोटा—सा गांव पड़ता है छत्तर। परमा चौधरी इसी

गांव में रहते हैं। बेहद गरीब और किसान परिवार में जन्म लेने वाले परमा चौधरी के पिता ने उसे पढ़ने–लिखने के लिए गांव के ही एक स्कूल में दाखिला करा दिया था। परमा रोज पांच किलोमीटर पैदल स्कूल जाते, उस समय उनके पास बस में जाने के लिए किराया नहीं हुआ करता था। पांच किलोमीटर के इस सफर में परमा अक्सर पहाड़ी क्षेत्र में फौजियों को आते–जाते देखते। वह इनकी चाल–ढाल और ड्रेस से आकर्षित होते। एक दिन उन्होंने एक फौजी को रोका और उनसे कहा, मैं भी फौज में भर्ती होना चाहता हूं? फौजी ने उन्हें सलाह दी कि पहले वह अपनी पढ़ाई पूरी करे और खुद को तंदुरुस्त बनाने के लिए दौड़े, खेलों में रूचि ले। फौजी की इस सलाह को परमा चौधरी ने आदेश की तरह माना। वह पांच किलोमीटर दौड़ कर स्कूल जाता और दौड़ कर ही वापस आता। इस तरह परमा चौधरी के मन में बचपन से ही यह बात बैठ गई कि उन्हें फौज में भर्ती होना है। वह पिता के साथ खेतीबाड़ी में भी हाथ बंटाते और देखते कि उसके पिता किस तरह खेतों में गेहूं, छल्ली और अन्य परंपरागत फसलें ही लेते हैं।

परमा राम चौधरी अपने पिता को दिन–रात गरीबी से जूझते हुए देखते। खेती के प्रति परमा चौधरी के भीतर आकर्षण तो था लेकिन उनकी पहली प्राथमिकता फौज में जाना ही थी। लिहाजा दसवीं पास करने के बाद वह फौज में भर्ती हो गए। एक फौजी द्वारा सिखाए गए अनुशासन के पहले पाठ को उन्होंने बखूबी याद रखा। वह फौज में भी एक अच्छे एथलीट साबित हुए और उन्होंने अनेक पुरस्कार जीते। लेकिन फौज में रहते हुए भी उन्हें लगता कि उनके खेत उन्हें वापिस बुला रहे हैं।

लगभग 12 साल फौज में नौकरी करने के बाद परमा राम चौधरी वापस अपने गांव, अपनी जमीन के पास लौट आए। फौजी का फर्ज निभाने के बाद अब वक्त था एक किसान का फर्ज निभाने का। यहां परमा राम चौधरी ने देखा कि किसान अब भी परंपरागत ढंग से ही खेती कर रहे हैं, अब वह किसान उन्हीं समस्याओं से जूझ रहा है जिनसे पहले जूझ रहा था। उन्होंने देखा कि यहां के किसानों के जीवन में कुछ भी नहीं बदला था। परमा चौधरी कुछ नया करना चाहते थे। परमा चौधरी ने आय बढ़ाने के लिए डेयरी फार्मिंग का काम शुरू किया। हालांकि यह काम वह पहले भी करते रहे थे लेकिन इस बार उन्होंने दूध से अनेक उत्पाद घी, पनीर बेचने का भी काम किया। इससे उनकी आय बढ़ गई। 2003 में परमा राम चौधरी मशरूम और रेशम की खेती में आए। यह काम स्थानीय किसानों के लिए एकदम नया था, लेकिन कृषि विज्ञान केंद्र की मदद से परमा राम चौधरी ने इस काम को बखूबी किया और इसमें सफलता भी पाई। पहाड़ी क्षेत्र में रहने और खेती करने के कारण परमा राम चौधरी यह जानते थे कि यहां बैलों से खेती करना आसान नहीं है। इसकी एक वजह थी कि इसमें मेहनत ज्यादा लगती थी और परिणाम अनुकूल नहीं होते थे। उन्होंने यह भी देखा कि नई पीढ़ी बैलों से खेती करना पसंद नहीं करती है। उन्होंने सोचा क्यों ना कोई ऐसा उपकरण तैयार किया जाए जो बैलों की कमी को पूरा कर सके।

उन्होंने कड़ी मेहनत और जुनून से एक हल तैयार किया। वह बताते हैं, यह हल एक साइकिल के हैंडिल से बना है। एक साइकिल से दो हल बनाये जा सकते हैं, बस एक हैंडिल की और जरूरत पड़ती है।" कई दिनों की मेहनत के बाद जब हल बनकर तैयार हो गया तो उन्हें बेहद खुशी हुई। इस हल से वह खुद खेती करते और स्थानीय किसानों को इसका प्रयोग करने की सलाह देते। 15 से 20 किलो वजन वाले इस हल को आसानी से एक जगह से दूसरी जगह ले जाया जा सकता है और इससे महिलाएं और बच्चे भी आसानी से काम कर सकते हैं। बाद में किसानों की जरूरत को मद्देनजर रखते हुए परमा राम चौधरी ने इस हल में बिजाई, और लेवलिंग का भी जुगाड़ कर दिया। यानी इस हल के जरिए किसान अपने आप बीज बुआई कर सकते हैं, जमीन को समतल कर सकते हैं। इसकी कीमत महज 1400–1500 रुपये बैठती है जिसे कोई भी किसान आसानी से खरीद सकता है।

एक तरफ परमा राम चौधरी अपनी खेती में तरक्की कर रहे थे और दूसरी तरफ ऐसे उपकरण किसानों को मुहैया करा रहे थे जो उनकी खेती को आसान बनाते हैं, उनके श्रम को कम करते हैं और पैदावार बढ़ाने में काम आते हैं। परमा राम चौधरी यह भी जानते थे कि इस पहाड़ी गांव में ट्रैक्टर का आ पाना संभव नहीं होता, पहाड़ी

क्षेत्र होने के कारण ट्रैक्टर को एक खेत से दूसरे खेत तक नहीं लाया ले–जाया जा सकता। लिहाजा परमा राम चौधरी ने एक ट्रैक्टर बनाने की सोची। उन्होंने एक खराब बाइक के इंजन से एक छोटा–सा ट्रैक्टर बना डाला। यह ट्रैक्टर पहले पेट्रोल से स्टार्ट होता फिर इसे मिट्टी के तेल से चलाया जा सकता है। इस ट्रैक्टर का इस्तेमाल सबसे पहले परमा राम चौधरी ने अपने खेतों में किया और फिर इसका इस्तेमाल स्थानीय किसान भी करने लगे।

परमा राम चौधरी को यह देखकर अच्छा लगता है कि वह स्थानीय किसानों को आगे बढ़ने के रास्ते दिखा रहे हैं। परमा ने मशरूम की खेती में भी खासी तरक्की की। 25 बैग्स से शुरू हुई मशरूम की खेती को आज उन्होंने अपनी मेहनत से 400 बैग्स तक पहुंचा दिया है। लेकिन वह इसी से संतुष्ट नहीं होते। उन्होंने देखा कि एक बार मशरूम पैदा हो जाने के बाद बैग्स बेकार हो जाते हैं। उनके जेहन में आया कि इन बैग्स को रिसाइकिल किया जाना चाहिए। इसके लिए वह अनेक कृषि वैज्ञानिकों से मिले। लेकिन किसी ने भी उन्हें ऐसा करने की सलाह नहीं दी। परमा राम चौधरी जिद्दी आदमी हैं और उन्होंने इन बैग्स को एकत्रित किया, उसमें मिट्टी और कुछ अन्य चीजें डाल कर उसे कुछ समय के लिए छोड़ दिया। अब उनके पास खाद तैयार हो चुकी थी। इस खाद का इस्तेमाल भी उन्होंने पहले अपने खेतों में ही किया, जब पैदावार बहुत अच्छी और गुणवत्ता वाली हुई तो वह इस खाद को स्थानीय किसानों को भी देने लगे।

देखते ही देखते परमा राम चौधरी अपने क्षेत्र के एक अहम किसान बन गए। लोग उनकी मेहनत, नई–नई तकनीकों के इस्तेमाल, और अपने उत्पादों में वैल्यू एडीशन की उनकी सोच के कायल होते गए। स्थानीय किसानों ने देखा कि परमा चौधरी सर्दियों के दौरान रेशम पालन के लिए तय कमरे का उपयोग मशरूम की खेती के लिए करते हैं और अपशिष्ट कम्पोस्ट का इस्तेमाल घर में ही बहुस्तरीय फसलें उगाने के लिए करते हैं। यह सब उनकी सोच का ही परिणाम है कि वह इतना विविधतापूर्ण काम इतने सलीके से कर पाते हैं। परमा राम चौधरी को सस्ती और नई तकनीक ईजाद करने और सीमांत कृषिजोत सुरक्षा के लिए समेकित कृषि प्रणाली मॉडल के माध्यम से सीमित संसाधनों के प्रभावशाली उपयोग के लिए अनेक पुरस्कारों से भी सम्मानित किया गया है।

परमा राम चौधरी ने जय जवान, जय किसान के साथ जय विज्ञान के नारे को भी सही अर्थों में चरितार्थ किया है। उन्होंने यह साबित किया है कि आदमी अगर सोच ले तो उसे आगे बढ़ने से कोई नहीं रोक सकता।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)
ई–मेलः gupt9sudhanshu@gmail.com

पत्रिकाओं के शुल्क की नई दरें

क्रम सं.	पत्रिका का नाम	एक प्रति का मूल्य	विशेषांक का मूल्य	वार्षिक शुल्क	द्विवार्षिक शुल्क	त्रिवार्षिक शुल्क
1.	योजना	22	30	230	430	610
2.	कुरुक्षेत्र	22	30	230	430	610
3.	आजकल	22	30	230	430	610
4.	बालभारती	15	20	160	300	420
5.	रोजगार समाचार	12	–	530	1000	1400

*पत्रिकाओं का संशोधित मूल्य अप्रैल 2016 से प्रभावी होगा
#रोजगार समाचार की नई दरें 6 फरवरी 2016 के अंक से लागू होंगी

हमारे प्रकाशन

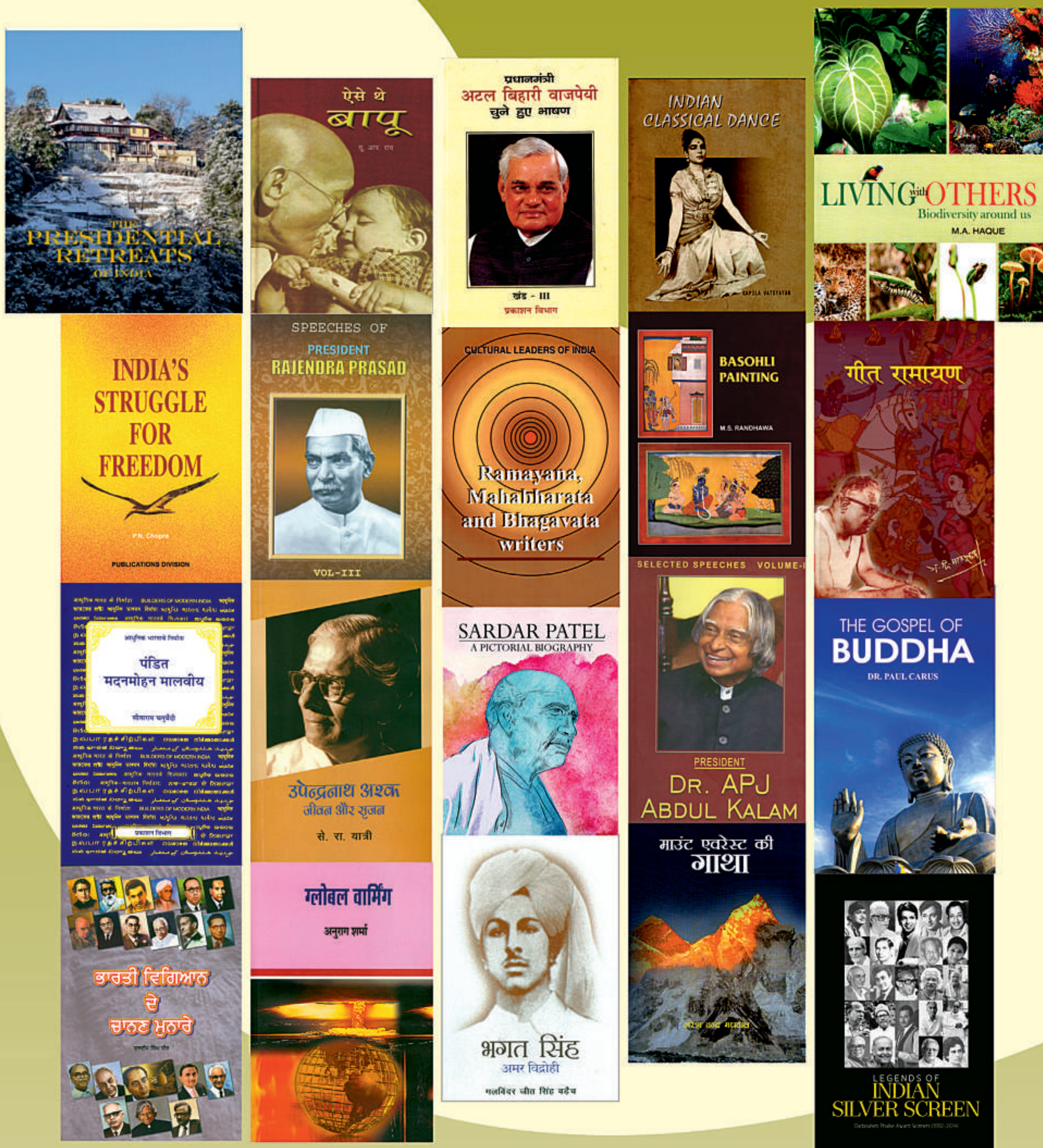

प्रकाशन विभाग

सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार

सूचना भवन, सी जी ओ कॉम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली – 110003

वेब साइट : **publicationsdivision.nic.in** फेसबुक : **www.facebook.com/publicationsdivision**

पुस्तकें मंगाने और व्यापारिक पूछताछ के लिए संपर्क करें –

टेलीफोन : 24365610, 24367260 फैक्स : 24365609, ई मेल : dpd@sb.nic.in, businesswing@gmail.com

आर. एन. आई. / 708 / 57
डाक–तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. (एस)–05 / 3164 / 2015–17
आई.एस.एस.एन. 0971–8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.)–54 / 2015–17
1 मार्च 2016 को प्रकाशित एवं 5–6 मार्च 2016 को डाक द्वारा जारी

R.N.I./708/57
P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2015-17
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-54/2015-17
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi.

प्रकाशक और मुद्रक : डॉ. साधना राउत, अपर महानिदेशक एवं प्रभारी, प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली–110003.
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू–30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया–II, नई दिल्ली–110020, संपादक : ललिता खुराना